प्रथम संस्करण, १९४४

द्वितीय संस्करण, १९५०

प्रकाशक—किताब-महल, ५६-ए जीरो रोड, इलाहाबाद

मुद्रक—मनोहरलाल खरबन्दा लॉ प्रिंटिंग प्रेस, इलाहाबाद

समर्पण

आनन्द कौसल्यायनके कर-कमलोंमें
जिनकी मित्रता मेरी जीवन-प्रगतिका
एक अभिन्न अंश बन गई है।

प्राक्कथन

साइंसके युगमें विश्व और जीवनके प्रति हमारी दार्शनिक दृष्टि किस प्रकारकी होनी चाहिए, इसपर एक पुस्तक लिखनेकेलिए मैंने क़लम उठाई, लेकिन हिन्दीमें किस प्रकार ऐसे ग्रंथोंकी कमी है, उसे देखते हुए भिन्न-भिन्न साइंस-संबंधी विचारोंकी ओर इशारा करते हुए चल देना, केवल हिन्दी जाननेवाले पाठकोंके प्रति अन्यायसा मालूम हुआ। और जब मैंने कुछ साइंस-संबंधी विचारोंपर भी लिखना शुरू किया, तो यह समझनेमें बहुत देर नहीं लगी, कि सभी विषयोंको इकट्ठा कर एक पुस्तक नाम देनेकी जगह यही अच्छा है, कि उन्हें एक दूसरेकी सहायक, किन्तु स्वतंत्र पुस्तकें समझा जाये। फलतः मेरी एक पुस्तककी योजनाने चार पुस्तकोंका रूप लिया जिनमें पहिली है यही "विश्वकी रूपरेखा", दूसरी "मानव-समाज", तीसरी "दर्शन-दिग्दर्शन" और अन्तिम "वैज्ञानिक भौतिकवाद"।

"विश्वकी रूपरेखा"में मैंने क्या लिखा है, इसके जाननेके लिए पुस्तक आपके सामने है। मैंने विषयको भरसक सरल करनेकी कोशिश की है, और यह ध्यानमें रखा है, कि उसी तलकी योग्यता रखनेवाले अंग्रेजीदाँ पाठकको यहाँ वर्णित विषय समझनेमें जितने आसान लगें, उतनेसे कुछ कम योग्यता रखनेवाले हिन्दीदाँ पाठक भी उन्हें समझ सकें। इसमें मुझे कितनी सफलता हुई है, इसे पाठक ही बतला सकते हैं।

पुस्तकमें कितने ही ऐसे नये विषय आए हैं, जिनपर अभी हिन्दीमें क़लम उठाना मुश्किल समझा जाता है; किन्तु अपने अनुभवके बलपर मैं कह सकता हूँ, कि मुझे उसमें कोई विशेष अड़चन नहीं मालूम हुई।—वस्तुतः हमारी हिन्दी उससे कहीं अधिक क्षमता रखती है, जितनी कि "पानीमें पैर रखने" से पहिले हम समझते हैं। साइंसके पारिभाषिक शब्दोंके चुनावमें मैंने कुछ स्वतंत्रतासे काम लिया है, किन्तु जिन प्रतिशब्दोंको मैंने यहाँ अन्तिम

धार चुना है, उन्हें कई बारकी प्रयोगकी कसौटीपर उतरना पड़ा है, इसलिए वह अपने पर्यायवाची पश्चिमी शब्दके बहुत नजदीक भी हैं। पाठकों और लेखकोंकी जानकारीके लिए मैंने अंग्रेजी प्रतिशब्दोंके साथ इन परिभाषाओंकी एक सूची दे दी है।

मैं समझता हूँ, मैंने इस ग्रंथको लिखनेमें अनधिकार चेष्टा की है। —विषय साइंस हो उसमें भी "सापेक्षतावाद", "क्वन्तम्-सिद्धान्त", परमाणुकी भीतरी दुनिया जैसे सूक्ष्म तत्त्व, और फिर उसपर क़लम उठावे एक ऐसा व्यक्ति जो साइंसका ग्रेजुएट तो क्या, जिसने विश्वविद्यालयके चौखटेके भीतर कभी क़दम भी न रखा हो; इससे बढ़कर धृष्टता क्या हो सकती है ? तो भी ऐसी धृष्टताके लिए मैं मजबूर था। जबतक अधिकारी व्यक्ति हिन्दी, तथा केवल हिन्दीदाँ जनताको अपनी कृपाका पात्र नहीं समझते, तब तक मेरे जैसे अनधिकारियोंको धृष्टता करनी ही पड़ेगी।

पुस्तक लिखनेमें जिन विद्वानोंके ग्रंथोंसे मैंने सहायता ली है, उनमें कुछके नाम जहाँ-तहाँ आ गये हैं, और कितने हीके नाम मैंने अन्तमें दे दिए हैं। रसायनशास्त्रके ९२ तत्त्वोंकी सूची तथा उनकी विशेषताओंको मैं अपने पासकी सामग्रीसे पूरा नहीं कर सकता था; इसे मेरे तरुण मित्र श्री शिवयोगी तिवारी एम० एस्-सी० (हिन्दू विश्वविद्यालय)ने पूरा कर दिया, जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

सेंट्रल जेल
हजारीबाग, १२-२-४२

राहुल सांकृत्यायन

द्वितीय संस्करण—इस संस्करण में अत्यल्प परिवर्तन किये गये हैं।

प्रयाग ३-३-४९ रा० सां०

विषय-सूची

विषय — पृष्ठ

विषय

तृतीय अध्याय

(भौतिक तत्त्वोंके स्वरूप)

चतुर्थ अध्याय

(जीवन-तत्त्व)

षष्ठ अध्याय

(परमाणु-शक्ति और
परमाणु-बम)

फोटो चित्र-सूची

विश्वकी रूपरेखा

प्रथम अध्याय

विश्व

पृथिवी, सूर्य, चंद्रमा, सौर परिवार, तारे, आकाश-गंगा, चक्करदार नीहारिकाएँ, सापेक्षतावाद।

विश्व[1] महान् है, अनन्त है, सीमारहित है—ये बातें चिरकालसे सभ्य-असभ्य सभी प्रकारके लोगोंमें प्रसिद्ध हैं, और इससे उसकी विशालताके बारेमें कुछ कहना अनावश्यकसा मालूम होगा। किन्तु क्या यह प्रसिद्धि विश्वकी विशालताको बतलानेमें समर्थ है? इसका निर्णय तो आगे लिखे विवरणसे हो जायेगा, यहाँ हम सिर्फ इतना ही कहना चाहते हैं, कि मनुष्यकी उक्त धारणा ज्ञानपर नहीं अज्ञानपर निर्भर रही है। इतिहासके उषाकालसे ही मनुष्यने अपनी जिज्ञासाको तृप्त करनेके लिए कल्पना—चाहे वह मूलक हो या अमूलक—का सहारा लिया, यह वस्तुतः उसी तरहकी कल्पना थी। महान् एक गोल-मोल शब्द है, इससे विश्वकी वास्तविक विशालताका पता नहीं लग सकता। सीमान्त पृथिवीका भी नहीं है, और रबरके गेंदपर रेंगती चींटी भी उसके अन्तपर नहीं पहुँच सकती, यदि वह अपने ऊपरकी ओर 'नजर' न डाले—चींटीको नजर होती ही नहीं। विश्वकी विशालताका ठीक-ठीक पता हमें तब मिलता है, जब हम अपने

---

[1] Universe

पाससे चलकर पृथिवी, ग्रह-मंडल, सूर्य, अगणित तारे, तारा-गुच्छक, द्वीप-विश्व होते महान् विश्व तक पहुँचते हैं। आदिमें ही मनुष्यको यह सारा ज्ञान पका-पकाया नहीं मिल गया, इसकी प्राप्तिमें उसे बहुत परिश्रम और भूलें करनी पड़ीं।

§ १. पृथिवी

कोई समय था—और कितनोंके लिए वह समय अब भी अज्ञान या धर्मान्धतावश है—जब कि मनुष्यके लिए आकाशमें बिखरे तारे क्षुद्र ज्योति-बिन्दु मात्र थे। पृथिवी निस्सीम थी। गोलकी जगह सामने देखी जाती-सी चौरस थी। पानीके तल, नागके फण, कछुए, बैल या गजकी पीठपर खड़ी थी। पहिले-पहिल गोलकी कल्पना ऊपरी आवेको गोलार्ध करनेके लिए तैयार हुई। गणित और ज्योतिषके वेधने पृथिवीको गोल मनवानेमें सफलता पाई, किन्तु यह सिर्फ दो-ढाई हजार सालकी बात है। पृथिवीके गोल होनेकी पक्की छाप जब भूगोल शब्द द्वारा हो गई, तब भी विश्वमें पृथिवीका ही प्रधान स्थान रहा—वही विश्वकेन्द्र मानी गई। कहा जाता रहा—सूर्य उसीकी परिक्रमा करता है; तारे उसीको मुख्य मानकर नभोमंडलमें अपनी यात्रा जारी रखते हैं।

यूनानमें हेराक्लिद्[1] (ई० पू० ३८८-१५) और अरिस्तार्चु[2] (ई० पू० २५०)ने, और भारतमें आर्यभट्ट[3] (४५० ई०)ने प्रबल युक्तियोंसे सिद्ध किया, कि पृथिवी ही सूर्यके गिर्द घूमती है। तो भी उनकी बातकी ओर लोगोंने ध्यान नहीं दिया, क्योंकि पुरानी धारणाको तोड़नेके लिए तर्कसे भी ज्यादा तेज किसी दूसरे हथियार—प्रयोग या वेध—की ज़रूरत थी।

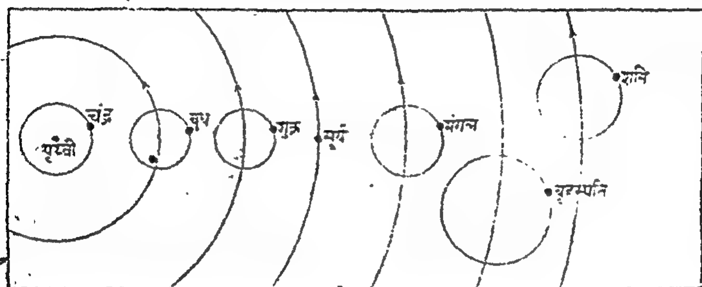
---

[1] Heraolides. [2] Aristarohus.

[3] "कन्दुकरूपा धात्री सर्वत्राम्भोविपर्वतद्वीपैः। व्याप्तं कन्दुकपृष्ठं ....। सुखगे कन्दुकपृष्ठे चरन्ति सर्वे यथाऽत्र वयम्।"

—आर्यभट्ट (भुवन० ५।७)

ज्योतिषके विकासके साथ भूकेन्द्रक विश्वके खिलाफ कितने ही प्रबल प्रश्न उठे, किन्तु ज्योतिषी अपने पुराने सिद्धांतको बिना छोड़े उसमें सुधार करते रहे; यहाँ तक कि वैज्ञानिक युगके आरंभ तक यूरोपमें प्रचलित, तालमी (१५० ई०)का ज्योतिष भूकेन्द्रताको कायम रखनेके लिए ग्रहोंकी



चित्र १

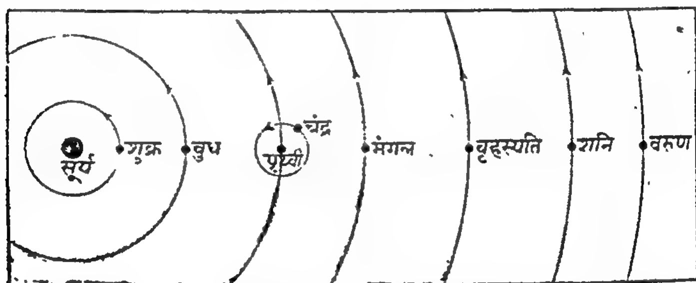
कक्षाओंको पृथिवीके गिर्द घूमनेवाली दूसरी कक्षाएँ मानता रहा (चित्र १) और भारतमें तो आज भी पंचांगोंमें आर्यभट्टकी जगह वराहमिहिर, ब्रह्म-गुप्त, भास्कराचार्यके भूकेन्द्रक ज्योतिषका बोलबाला है।

सोलहवीं सदीमें यूरोपमें विचार स्वातन्त्र्यकी लहर आरंभ हुई। उस वक्त हालैंडके ज्योतिषी कोपरनिकस्[1] (१४७३-१५४३ ई०)ने पुराने यूनानी ज्योतिषियोंकी भूभ्रमण-संबंधी युक्तियोंको गणित और तत्कालीन मोटी वेध-प्रक्रियासे परखा। उसे मालूम हुआ, कि भूभ्रमण मान लेनेपर ग्रहोंकी गति और कक्षाएँ अधिक सरल हो जाती हैं, और तालमीकी कितनी ही क्लिष्ट कल्नाओंकीआवश्यकता नहीं रह जाती। तो भी उसकी तथा उसके पुष्टिकर्त्ताकेप्लरकी बातोंपर पूरा विश्वास तबतक नहीं हुआ, जबतक कि गेलेलियो (१५६४-१६४२ ई०)ने १६१२में दूरबीनका आविष्कारकर आँखोंके प्रत्यक्ष करनेकी शक्तिको कई गुना

---

[1] Copernicus.

बढ़ा बुध और शुक्रके पिंडोंके कलासे घटते-बढ़ते आकारसे साबित नहीं कर दिया कि वह कोपरनिकस्के सिद्धांतके अनुसार पृथिवीकक्षा और सूर्यके बीचमें घूम रहे हैं। बृहस्पतिके किनारे घूमनेवाले चार उपग्रहोंको दिखला कर उसने उस बातकी और पुष्टि की। इस प्रकार १५४३ ई०में उठाई कल्पनाको ६६ वर्ष बाद दूरबीनके प्रत्यक्षने ठोस सत्यका रूप दिया। और तालमीके ग्रह-समुदायकी पेचीदा कक्षाओंकी जगह हमें आजके सौर-परिवारकी सीधी सादी कक्षाएँ (चित्र २) मिलीं। इन्हें देखकर आर्य-भट्टके विरोधियोंपर आश्चर्य जरूर होगा; किन्तु हमें याद रखना चाहिए कि दूरबीनके बिना सूर्यकेन्द्रक ज्योतिषका पल्ला भारी नहीं हो सकता था।



चित्र २

१. आकार और विस्तार

भूमध्य-रेखापर पृथ्वीके भीतरसे यदि एक तीली आर-पार की जावे तो वह ७९१३ मील होगी। यदि भूमध्य रेखापर सूत लपेटा जाये, तो एक फेरेके लिए २४,९०२ मील सूतकी ज़रूरत होगी, किन्तु उत्तर-दक्खिन—अर्थात् उत्तरी ध्रुवसे दक्खिनी ध्रुव तक बेधी गई तीली भूमध्यकी अपेक्षा १७ मील कम होगी। इससे मालूम होगा, कि पृथिवीका आकार पूर्णतया गोल नहीं है, दोनों सिरोंपर वह नारंगीकी भाँति—किंतु उससे बहुत कम—चिपटी है। इसका कारण है, आरंभमें पृथिवीका तरल होना, और

(भूमध्यपर) १०४०$\frac{१}{२}$ मील प्रतिघंटेके जवर्दस्त वेगसे अपनी धुरीपर घूमना। आज भी इस वेगके कारण ध्रुवोंकी अपेक्षा भूमध्य-रेखापर १३$\frac{१}{२}$ मील अधिक ऊँची जलराशि खड़ी है। पृथिवीका कुल क्षेत्रफल[1] १९,६६,४०,००० वर्गमील है, जिसमें एक-चौथाई स्थल-भाग ५,७२,५५,००० वर्गमील, और $\frac{३}{४}$ जल-भाग (समुद्र) १३,९६,८५,००० वर्गमील है।

२. पृथिवीका गर्भ

सीधे तौरसे पृथिवीके भीतर हम बहुत दूर तक नहीं घुस सके हैं। गहरीसे-गहरी खान—मारोवेल्हो (ब्राज़ील) सिर्फ ६४२६ फीट (प्रायः सवा मील) है। यह दूरी पृथिवीके केन्द्र तककी दूरी (३९५६$\frac{१}{२}$ मील)के सामने नगण्य सी है। हर दो सौ फीटपर १ डिग्री (फार्नहाइट) गरमी बढ़ती जाती है, इसलिए रास्ता खुला होनेपर भी हम पृथिवीके नीचे अधिक दूर तक उतर नहीं सकते। पृथिवीकी भीतरी अवस्थाको जाननेके लिए भूमापक-यंत्र–सीसमोग्राफ–उसी तरह हमारा भारी सहायक हुआ है, जिस तरह प्रकाशकिरणोंके पहुँचनेमें हजारों-लाखों वर्षों लगनेवाली दूरी-के तारोंकी जानकारीके लिए स्पेक्ट्रास्कोप (रश्मिवर्णदर्शक)। भूकम्पको लहरें पृथिवीके निचले गर्भमें ३६० मील प्रतिघंटेकी चालसे दौड़ती हैं,

---

[1] भारतीय ज्योतिषियोंने पृथिवीका माप (योजनोंमें) इस प्रकार दिया है—

	व्यास	परिधि	क्षेत्रफल
आर्यभट्ट (४५० ई०) ..	१,०५६	८,०००	
ब्रह्मगुप्त	१,५८१	६,५२२	
आर्यभट्ट (द्वितीय) ..	२,१०९	६,६२५	१,३९,७१,८४९
भास्कराचार्य ..	१५८१$\frac{१}{२४}$	४,९६७	७८,५३,०३४

५ मीलका योजन माननेपर भास्कराचार्यकी गणना आजकी नापके अधिक समीप पहुँचती है।

किन्तु ऊपरी स्तरमें उनकी गति १२० मील प्रतिघंटा है, जिससे मालूम होता है कि गर्भकी घनता अधिक है। एक स्तरमें लहरोंकी गति एकसी होती है; जिससे यह भी सिद्ध होता है, कि एक गहराईमें पृथिवी उन्हीं तत्त्वोंकी बनी है।

ग्रहों और चन्द्रमापर पृथिवीके आकर्षणके प्रभाव तथा दूसरे तरीकोंसे पता लगा है, कि पृथिवीकी घनता पानीसे साढ़े पाँच गुना—अर्थात् काँचसे ज्यादा किन्तु फौलादसे कम है। यह घनता पृथिवीके सभी स्तरोंमें एक-सी नहीं है। (१) केन्द्रके पास सबसे भीतरी गर्भ—जो २२०० मील व्यासका है—सबसे अधिक घना अर्थात् जलसे ५½ गुना है, और लोहा-निकल धातुका बना है। (२) इसके ऊपर १७०० मील मोटी खोल बसाल्ट[१]-चट्टानोंकी है, जिसकी घनता जलसे तिगुनी है। (३) उसके ऊपर तीस मील मोटी खोल चट्टानों-पत्थरोंकी है, जो जलसे पौने तीन गुना (२.७) घनी है। इसी खोलके ऊपर महाद्वीप बसे हुए हैं। सबसे भीतरवाला लोह-निकलमय गर्भ सूर्यसे निकले वाष्पीय पिंडका वह भाग है, जो भारीपनके कारण भीतर बैठ गया, बसाल्ट उसी वक्तका हलका भाग है। दो अरब वर्षोंकी हवा, धूप औरवर्षाकी टक्करों, तथा ज्वाला-मुखियों द्वारा गर्भसे बाहर निकाले बाल, राख, लावा, आदिसे ऊपरी चट्टानोंवाला स्तर बना।

भूगर्भ-शास्त्री ऊपरी स्तरके पाषाणोंको तीन श्रेणियोंमें विभाजित करते हैं—**स्तरीय** (तहपर तह जमे), **आग्नेय** और **रूपान्तरित**।

(१) स्तरीय पाषाण—धूप, हवा, पानीके घर्षणसे निकले रजकण (=धूलि) पानीमें घुल पंकके रूपमें तहपर तह जम गया; वही ये स्तरीय पाषाण हैं। पृथिवीका तापमान जब जीवनके अनुकूल हो गया, तथा खाद्य सामग्री आ मौजूद हुई, तो इन्हीं स्तरोंपर आजसे करोड़ों वर्षो पूर्व आदिम वनस्पति और प्राणधारी उत्पन्न हुए। विकसित होते-होते विशाल-

[१] Basalt.

काय वृक्ष बन गए, फिर वृक्ष गिरते गए। हवा, वर्षा और नदियोंने मिट्टीके नीचे उन्हें दवा दिया। इन्हें ही आज हम पत्थरके कोयलेके रूपमें पा रहे हैं। पत्थरका कोयला प्रायः शुद्ध कार्वन है।

(२-३) **आग्नेय और रूपान्तरित चट्टानें**--ये चट्टानें भूगर्भके निचले दोनों स्तरोंसे ज्वालामुखियों द्वारा फेंके अंश हैं। लोहा, सोना आदि सभी उपयोगी धातुएँ इन्हीं चट्टानोंमें मिलती हैं। इन्हीं चट्टानोंके भरोसे कोलारकी सोनेकी खानें, जमशेदपुरका लोहेका कारखाना आबाद है।

३. पृथिवी का भार

कुछ टन सीसेपर पृथिवीका आकर्षण कितनी मात्रामें होता है, और उतनी आकर्षण मात्राके लिए भार कितना होना चाहिए—इस तरीकेसे पृथिवीका वजन ६०६७ $\times$ १०^१८ टन या प्रायः १७० लाख-लाख-खरब (१७० हज़ार शंख) मन मालूम हुआ है।

४. वायुमंडल

जलचर और थलचर ही पृथिवीके सहारे और उसके आकर्षणमें बँधे हुए नहीं हैं, वल्कि पृथिवीकी चारों ओर दो सौ[1] मीलके क़रीब मोटी हवाकी खोल (वायुमंडल) भी उससे बँधी हुई है। वायुमंडलके सहारे पक्षी और हवाई जहाज़ उड़ते हैं। हवामें भी भार है। वह समुद्र-तलपर अधिक घनी और ऊपर क्रमशः हलकी होती जाती है। समुद्रतलपर वायुकी जो घनता है, वह दस मीलकी ऊँचाईपर दशांश, और सौ मीलपर दस अरबमें एक हिस्सा रह जाती है। उसका दवाव जहाँ समुद्रतलपर बैरामीटरसे ७६० है, वहाँ ७२ हज़ार फ़ीटपर वह सिर्फ़ तीस रह जाता

---

[1] भास्कराचार्यने "सिद्धान्त-शिरोमणि" में १२ योजन (=६० मील) कहा है।

है। हवाके इसी हलकेपनके कारण ही ऊँचे पहाड़ोंपर जल्दी-जल्दी श्वास लेनेकी ज़रूरत पड़ती है। हवाके हलकेपनके साथ जैसे बरामीटर गिरता जाता है, वैसे ही पानीके उबलनेका मान भी कम होता जाता है। उदाहरणार्थ जहाँ समुद्रतलपर पानीके उबलनेके लिए १००° सेंटीग्रेड (२१२° फार्नहाइट) गर्मीकी ज़रूरत है, वहाँ २९ हजार फ़ीट ऊपर यूरेस्ट पर्वतपर ७४° सें० तथा ७२ हज़ार फ़ीटपर २९° सें०से पानी उबलने लगता है।

भौतिकतत्त्व ठोस, तरल और गैस (हवा) इन तीन रूपोंमें मिलते हैं। हवा भी इन्हीं आक्सिजन[१] नाइट्रोजन[२], कार्बन अर्गोन, क्रिप्टोन, जलीय (=हाइड्रोजन$_2$+आक्सिजन) वाष्प तथा कुछ और तत्त्वों—से बनी है। पृथिवीसे नौ मीलकी ऊँचाई तक पाँच भागमें प्रायः चार भाग ($\frac{४}{५}$) नाइट्रोजन (परमाणुभार १४) और एक भाग आक्सिजन (परमाणुभार १६) हैं। आक्सिजन भारी है, इसलिए पृथिवीके पास ही वह ज्यादा मिलता है। आगे ऊँचाईके साथ आक्सिजन घटता और नाइट्रोजन बढ़ जाता है और तीस मीलपर नाइट्रोजनका परिमाण आक्सिजनसे आठ गुना ज्यादा हो जाता है। हाइड्रोजन[३] सबसे हलका अर्थात् सिर्फ़ दो परमाणुभारका तत्त्व है, वह हवाके ऊपरी तलोंमें रहता है; ७० मीलकी ऊँचाईपर तो वायुमंडलमें आक्सिजन और नाइट्रोजन लुप्त हो सिर्फ़ हाइड्रोजन रह जाता है।

तत्त्वोंके भारी-हलकेपन तथा उनपर पृथिवीके आकर्षणका प्रभाव हवाको एकरस नहीं रहने देता। यदि वायुमंडल एकरस होता, तो वह २०० मील ऊँचा होनेकी जगह सिर्फ़ ५ मील ही का रह जाता। रातको पृथिवीकी तरफ़ टूटकर गिरनेवाले 'तारे' या उल्कासे हमें वायुमंडलकी ऊँचाईका पता लगा है। वायुरहित आकाशमें यात्रा करते वक्त वह दिखलाई नहीं पड़ता, किन्तु वायुमंडलमें घुसते ही उसके घर्षणसे उल्का जल

[१] Oxygen. [२] Nitrogen. [३] Hydrogen.

उठता है। एक जलते उल्काका किन्हीं दो स्थानोंसे वेध लेनेपर उसकी ऊँचाई त्रिभुजके हिसाबसे निकाली जा सकती है।

पानीसे भाप और भापसे बादल बनता है, यह हम जानते हैं। यह बादल भी वायुमंडलमें ही बनता, तथा उसीमें तैरता एक जगहसे दूसरी जगह जाता और बरसता है। नज़दीकवाले बादल ही बरसनेवाले होते हैं—

"बरषहिं जलद भूमि नियराये।" (तुलसीदास)

भिन्न-भिन्न प्रकारके बादलोंकी ऊँचाई निम्न प्रकार है (चित्र ४,५)—

क्युमुलो-निम्बस्[1]	बिजलीकी कड़कवाला	५,००० फुट
क्युमुलस्[2]	बहुत हलका	१२,००० फुट
सिरो-क्युम्युलस्[3]		२०,००० फुट
	(आगे स्थानीय आँधियाँ नहीं)	
सिरो-स्ट्रेटस्[4]		२२,००० फुट
सिरस्[5]		३०,००० फुट

१२ हज़ार फ़ुटसे ऊपर बादल कम और वज़नमें हलके होते हैं। ये हवाई जहाजोंकी उड़ानमें बाधा नहीं डालते। २० हजार फुटके ऊपर आँधियोंका प्रवेश नहीं, इसलिए तरंगरहित शान्त समुद्रमें जिस तरह जहाजको चलनेमें दिक़्क़त नहीं होती, उसी तरह इस ऊँचाईपर विमान निश्चल भावसे उड़ सकते हैं। ३५ हजार फ़ुटसे ऊपर न बादलका विरोध, न तूफ़ानका भय है। इसीको स्ट्रेटोस्फेयर प्रशांत-वायुमंडल कहते हैं। यह आगे ५२ हज़ार फ़ुट[6] तक फैला हुआ है। तूफ़ानी समुद्रको छोड़ यदि शान्त समुद्रके रास्ते अपने अभीष्ट स्थान पर पहुँचनेका मौक़ा हो, तो कौन

---

[1] Cumulo-nimbus [2] Cumulus. [3] Cirro-Cumulus. [4] Cirro-Stratus. [5] Cirrus.

[6] शीतलताकी भाँति प्रशान्त-वायुमंडल भी सभी स्थानोंपर एकसा नहीं है। इंग्लैंडमें वह प्रायः ७ मील पर है, और दूसरे भूभागोंमें साढ़े पाँचसे आठ मीलकी ऊँचाई पर।

मल्लाह उसे अपनानेको तैयार न होगा ? यही वजह है, आजकल 'प्रशांत-वायु-मंडलमें उड़ान' करनेका बहुत प्रयत्न किया जा रहा है। हालमें (१९४१के मध्यमें) कितने ही जर्मन बमवर्षक निम्न प्रशान्त-वायुमंडलसे उड़े हैं। उन्होंने अंग्रेजी सर्चलाइटों और विमान-विध्वंसक तोपोंसे बचनेके लिए ऐसा किया। आकाशके इस भागमें उड़नेवाले विमानोंकी चालके बारेमें बड़ी लंबी-चौड़ी बातें कही जाती हैं, किन्तु वह ३६ हजार फीटसे ऊपर साढ़े पाँच सौ मील प्रतिघंटे तक ही पहुँच सकती है, और यह कम नहीं है। समुद्रतलकी वायुमें शब्द ७७० मील प्रतिघंटे की चालसे चलता है, आगे उसकी चाल अपने आधारके हलके होनेसे ३६ हजार फुटपर घटकर ६६० मील प्रतिघंटे रह जाती है, और यही चाल आगे एकसी बनी रहती है। हवा शान्त होकर यद्यपि इस ऊँचाईपर विमानोंको मदद पहुँचाती है, किन्तु साथ ही हलकेपनके कारण वहाँ दूसरी कठिनाइयाँ उठ खड़ी होती हैं। स्थान अत्यन्त शीतल, आक्सिजनका अभाव, और दबावके कम होनेके कारण धातुओंकी उपयोगितामें अन्तर और कम तापमानके कारण वहाँ उत्पन्न अधिक गर्मीको काबूमें रखनेकी दिक्कतें—ये बाधायें हवाबाजोंकेलिए आसान नहीं हैं।

ऊपरी हवामें उड़नेका इधर काफी प्रयत्न हो रहा है। सबसे ऊँची वैमानिक उड़ान ४७,३५० फुटकी है, जिसे दोनाती ने १९३४ में सफलता-पूर्वक किया। इससे ऊपर गुब्बारे ही उड़ सके हैं। जिनमें सोवियत् उड़ाका प्रोकोफ़ियेफ़ (१९३३ ई०) ६२,३२० फुट और अमेरिकन स्टीवेन्स (१९३५ ई०) ७२,३९५ फुट तक पहुँचे थे।

आकाशका रंग वायुमंडलके कारण है। वायुके भीतर उड़नेवाले सूक्ष्म रजकणोंके कारण वह नीला मालूम होता है। ऐसे सूक्ष्म कणोंवाले वायु-मंडलसे जब सूर्यका प्रकाश गुजरता है, तो वे कण प्रकाश किरणोंको अगल-बगलमें बिखेर देते हैं। भिन्न-भिन्न रंगकी किरणोंकी तरंगोंकी लंबाई (तरंग-लम्बन) अलग-अलग होती है, यह हम आगे बतलायेंगे। लाल किरणोंकी तरंग लम्बान अधिक है, इसलिए वह कम बिखरती है, और नीली किरणें अपने कम तरंग-लम्बानके कारण सबसे ज्यादा

बिखरती हैं, जिससे हमें रजकणों द्वारा प्रतिफलित किया प्रकाश या 'आकाशका रंग' नीला मालूम होता है। वायुमंडलमें मोटे रजकण जितने ही कम हों, आकाश उतना ही अधिक नीला दिखाई पड़ेगा। जहाँ दूसरी किरणें खो गई रहती हैं, वहाँ लाल किरणें अपनी तरंग-लम्वानके अधिक होने तथा शाम-सबेरे तिरछे आनेके कारण अधिक मोटे वायुमंडलके कणोंसे बचकर हमारे पास पहुँचती और लौटती हैं, जिससे पृथिवी और उसके पासके वायुमंडलपर उनके प्रतिफलित होनेसे हमें उषा और गोधूलिकी लाली दिखाई पड़ती है।[1] यदि वायुमंडल न होता, तो उषा और सन्ध्याकी अरुणिमाके सुनहरे दृश्यका आनन्द हमें न मिलता। साथ ही सूर्यके डूब जानेपर भी कुछ देर तक वायुकणों द्वारा प्रतिफलित हो जो रोशनी हमें मिलती है, वह न मिलती, और सूर्यास्तके साथ ही पृथिवीपर अँधेरा-घुप्प छा जाता। वायु-मंडलकी ऊँचाईके अनुसार उसमें लटकते अणुओंकी कमी होती है, इसीके कारण भिन्न-भिन्न ऊँचाईके 'आकाशीय' रंगमें अन्तर होता है। २५ हजार फुटकी ऊँचाईपर आकाश समुद्री जलराशि-सा गाढ़ा नीला होता है, और ७० हजार फीटपर घना सलेटी (चित्र ३)।

५. गति और कक्षा

आरम्भसे अभी चार सौ वर्ष पहिले तक शिक्षित वर्ग भी सूर्य और तारोंको ही चलता मानता था। यह विश्वास कितना घर कर गया था, यह संस्कृतमें पृथिवीके 'अचला' नामसे ही प्रकट होता है। आज हमको भूमिके चलनेकी बात स्वयंसिद्धसी मालूम होती है, किन्तु जब बाईस सौ वर्ष पहिले

---

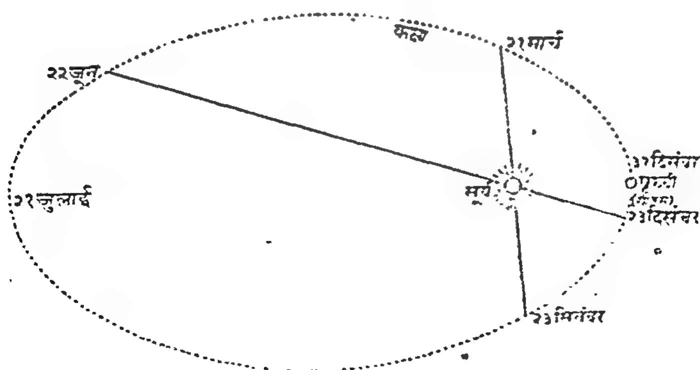
[1] श्रीपतिने इसके बारेमें लिखा है—

"भूम्युत्थितै रजोधूमैर्दिगन्तव्योम्नि संस्थितैः।
सूर्याल्पकिरणैर्मिश्रै राऽऽरुण्यमवभासते॥
विरलावयवं वस्तु यद् दृष्टेर्व्यवधायकम्।
तेनाभ्रमरुणोद्भूतं दृश्यते शक्रचापवत्॥"

चित्र ३

हेराक्लिद् (ई० पू० ३८८-३१५) ने पृथिवीको 'चला' कहा, तो उसका परिहास उड़ाया गया।

पृथिवी चलती है, और वह चाल साधारण नहीं है। तेज़ आदमी चार-पाँच मील प्रति घंटेकी चालसे मंज़िल तै करता है, और एक्के ताँगे १०-१२ मील तक, साधारणतया मोटरकार ३०-३५ मील प्रति-घंटे चलती है, यही चाल रेलकी सवारी गाड़ियोंकी है। बंबई मेल जैसी ट्रेनें भी ६० मील प्रतिघंटेसे ज्यादा नहीं चलतीं, अगस्त १९३९ में जान काब (अमेरिका)ने ३६३·८५ मील प्रतिघंटाकी चालसे मोटर-दौड़में विजय पाई। मनुष्यकी सबसे तेज़ सवारी विमानके ४०० मील प्रतिघंटे चलनेपर उसे बहुत ही तेज कहा जाता है। फ़्रिट्ज् वेन्डल (जर्मनी)ने विमानोंकी उड़ानमें ४६९·०१ मील प्रतिघंटाकी चालसे बाज़ी मारी। एक अंग्रेजी सैनिक विमान (फरवरी १९३९) ५०४ मील प्रतिघंटा उड़ सका है। किन्तु पृथिवीकी गति इन सबसे तेज है। वह दुनियाकी सबसे तेज चलनेवाली डाकगाड़ीसे १२०० गुना तेज चल रही है। वह अपनी साठ करोड़ मीलकी कक्षापर ३० किलोमीतर (=१८ मील) प्रतिसेकंड या प्रायः ६५ हजार मील प्रतिघंटेकी चालसे सर्राटा मार रही है। उसकी यह कक्षा या धावनपथ (चित्र ४) गोल नहीं अंडाकार है, और उसका मध्यम व्यास १८ करोड़ ६० मील है। इस सारी कक्षाको



चित्र ४

पृथिवी ३६५¼ दिनोंमें घूमती है। कक्षापर वह सीधे नहीं घूमती। उसका यह घूमना लट्टूकी तरह अपनी धुरीपर घूमनेके साथ-साथ होता है। धुरीपर का घूमना भी १०४०½ मील प्रतिघंटे (भूमध्यपर) हो रहा है, और अपने एक-एक चक्करके लिए उसे चौबीस घंटे फिरकना पड़ता है। यह फिरकना यद्यपि पच्छिमसे पूरबकी ओर होता है, किन्तु अपनी गतिका न ख्यालकर हम इसे पूरबसे पच्छिमकी ओर सूर्यका चलना समझते हैं। इस चक्करमें पृथिवीका जितना भाग सूर्यके सामने रहता है, उसे दिन कहा जाता है, और जो आड़में उसे रात। यदि पृथिवी दोनों ध्रुवोंसे पार होनेवाली तीली या धुरीपर घूमती तो रात-दिन बराबर होते, और ऋतुओंका भेद नहीं दिखाई पड़ता। किन्तु पृथिवीकी धुरी ध्रुवोंसे हटकर कुछ तिरछी है, इसीलिए भूमध्यपर जहाँ दिन-रात बराबर, तथा साल भर एक ही मौसिम रहता है, वहाँ निम्न अक्षांशोंमें दिन रातके घंटे इस प्रकार होते हैं—

अक्षांश	दीर्घतम दिन		ह्रस्वतम दिन	
	घंटा	मिनट	घंटा	मिनट
० (भूमध्य)	१२	०	१२	०
५	१२	१७	११	४३
१०	१२	३५	११	२५
१५	१२	५३	११	७
२०	१३	१३	१०	४७
२५	१३	३४	१०	२६
३०	१३	५६	१०	४
३५	१४	२२	९	३८
४०	१४	५१	९	९
४५	१५	२६	८	३४
५०	१६	९	७	५१
५५	१७	७	६	५३
६०	१८	३०	५	३०
६५	२१	९	२	५१
६६° ३३′	२४	०	०	०

और आगेके अक्षांशोंमें[1] कितने ही दिनोंतक सूर्योदय और सूर्यास्त ही नहीं होते—

	सूर्यास्त नहीं (दिन)	सूर्योदय नहीं (दिन)
६६ ३३′	१	१
७०	६५	६०
७५	१०३	९७
८०	१३४	१२७
८५	१६१	१५३
९० (ध्रुव)	१८६	१७९

६. आयु और आदिम काल

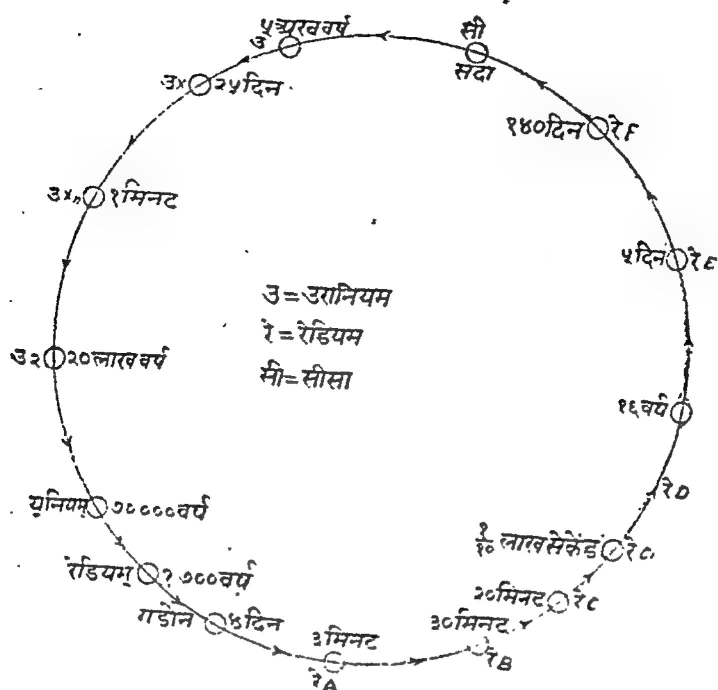
ईसाइयोंकी धर्मपुस्तकके अनुसार १९४० ई०में जमीन आसमानको बने ५७ सदियाँ गुजर गईं। पुराणोंके अनुसार दुनियाको बने दो अरब बरसके करीब हो गए। ऐसे ही दूसरी जातियों और धर्मोंमें भी सृष्टिके बारेमें अटकल लगाए गए हैं। यद्यपि हिन्दुओंकी कल्पना वास्तविकताके समीप पहुँचती है, किन्तु उसका आधार वैज्ञानिक गवेषणापर नहीं, सिर्फ अटकल-बाजी या संयोग है। पृथिवीकी आयुका पता लगानेके लिए वैज्ञानिकोंने भिन्न-भिन्न तरीके इस्तेमाल किए हैं। ज्योतिषशास्त्री हेलीने नदियों द्वारा लाकर समुद्रमें जमा होते नमकसे इसका अन्दाजा लगाना चाहा। एक नदी अपने पानीके साथ प्रतिवर्ष कितना नमक समुद्रमें लाती है, और समुद्रके पानीमें जितना नमक है, उसे लानेमें नदियोंको कितने साल लगे, इससे दस करोड़ वर्षका समय हमें मिलता है। लेकिन इस हिसाबमें कई गलतियाँ हैं। समुद्र और नदियाँ कब अस्तित्वमें आईं; दुनियाकी एक-एक नदी प्रतिवर्ष कितना नमक लाती है, यह ठीक-ठीक जानना मुश्किल है।

[1] पृथिवीके गोल नक्शेपर भूमध्य-रेखा (जो जावा होकर गुजरती है) से उत्तर और दक्खिनकी समानान्तर मेखलाएँ अक्षांश कही जाती हैं।

ज्यादासे-ज्यादा हम यही कह सकते हैं, कि पृथिवीके समुद्रोंकी आयु कमसे कम १० करोड़ वर्ष है।

पृथिवीकी आयु जाननेका दूसरा ढंग चट्टानोंके कालका पता लगाना है। प्रतिवर्ष मिट्टीकी कितनी मोटी तह जमती है, इस प्रश्नका उत्तर सभी जगहोंके लिए एकसा नहीं। नील और गंगाके कछारमें वह ज्यादा है। पटनामें चन्द्रगुप्त मौर्यके समयका तल १२-१३ फुट नीचे है, अर्थात् वहाँ हर हजारवें वर्ष ५ फुट मिट्टीकी तह जमी है। मिट्टीके और दबनेपर पत्थर कितने समयमें कितना मोटा बनता है, यह भी जाननेकी चीज है। इंग्लैंड और उत्तरी अमेरिकामें ४ हजार वर्षोंमें १ फुट मोटी चट्टान जमनेका हिसाब लगाया गया है। भूगर्भकी चट्टानें ५,२६,००० फुट या सौ मीलसे कुछ अधिक मोटी हैं; जिसके जमनेके लिए दो अरबसे कुछ अधिक साल लगे होंगे।

तीसरा तरीका ज़्यादा बारीक और विश्वसनीय है। वर्तमान शताब्दीके आरम्भमें कुरी-दम्पतीने रेडियम्का पता लगाया, और रदरफोर्ड तथा सोडीने परमाणुओंके स्वतः तितर-बितर होनेको सिद्ध किया। रेडियो-क्रियावाले तत्त्व—रेडियम्, उरानियम्, थोरियम् या अक्टीनियम्—अकारण ही टूटते, और दूसरे तत्त्वोंके रूपमें बदलते रहते हैं (चित्र ५)। यह विनाशकी गति बिलकुल स्वाभाविक है। इसपर देश-कालकी किसी खास परिस्थितिका कोई प्रभाव नहीं। उरानियम् ध्वस्त होते वक्त अपने बीचके नाभिकणको हेलियम् तत्त्वमें बदल देता है, और उसके ध्वंससे सीसा पैदा होता है। आदिमें पृथिवीकी पपड़ीमें सभी तत्त्व रहे होंगे, जिनमें उरानियम भी रहा होगा। तबसे उरानियम्के परमाणु बराबर सीसे और हेलियम् गैसके रूपमें परिणत होते रहे हैं। भिन्न-भिन्न चट्टानोंमें रेडियम् और सीसेका अनुपात क्या है यह मालूम किया जा सकता है, और उससे कालका पता लगाया जा सकता है। यद्यपि चट्टानका सभी सीसा उरानियम्से नहीं बना है, किन्तु उरानियम्से बना सीसा अपनी विशेषता रखता है, और हम अपने हिसाबमें ऐसे ही सीसेको ले सकते हैं। हेलियम् और सीसा दोनोंके हिसाबसे



चित्र ५

पृथिवीकी आयु दो अरब वर्ष मालूम होती है। इस प्रक्रियासे दूसरी चट्टानोंकी उम्रका भी पता लगा है, जिसे हमने चित्र ५ में दिया है।

(पृथिवीकी उत्पत्ति)—पृथिवीके पिंडकी बनावट और उसकी आयुके बारेमें हम कह चुके। यहाँ पृथिवीके उद्गमके बारेमें भी कुछ कहना जरूरी है। वैज्ञानिकोंका मत है, कि पृथ्वी सूर्यसे निकली है। दो अरब वर्ष पहिले कोई तारा सूर्य-पिंडके पाससे गुजरा जिसके आकर्षणसे सूर्यके गैसीय पिंडका एक भाग खिंचकर सिगार या गिल्लीकी शकलमें निकल पड़ा, और खिंचावके वेगके साथ टूटकर अलग हो गया। यह सिगार फिर कई

टुकड़ोंमें बट गया और हर एक टुकड़ा—गैसका गोल पिंड—अपने उद्गम-पिंड सूर्यके गिर्द घूमने लगा। यही पिंड ग्रह हुए, जिनमें हमारी पृथिवी भी एक है, और सिगारका तीसरा टुकड़ा होनेसे वह सूर्यसे तीसरा पिंड है। इस बातकी पुष्टि इससे भी होती है, कि सूर्यके ग्रह उक्त सिगारके आकार हीकी भाँति दोनों छोरोंपर कम और बीचमें ज्यादा मोटे हैं। मंगल और वृहस्पतिके बीचका पिंड टूटकर हजारसे अधिक छोटे-छोटे क्षुद्र ग्रहों "शिशुग्रहों"[1]में बँट गया है, जिनमें **एरोस्** सूर्यकी दूरी जानने तथा उसके द्वारा तारों और विश्वकी दूरी नापनेमें बड़ा सहायक सिद्ध हुआ है।

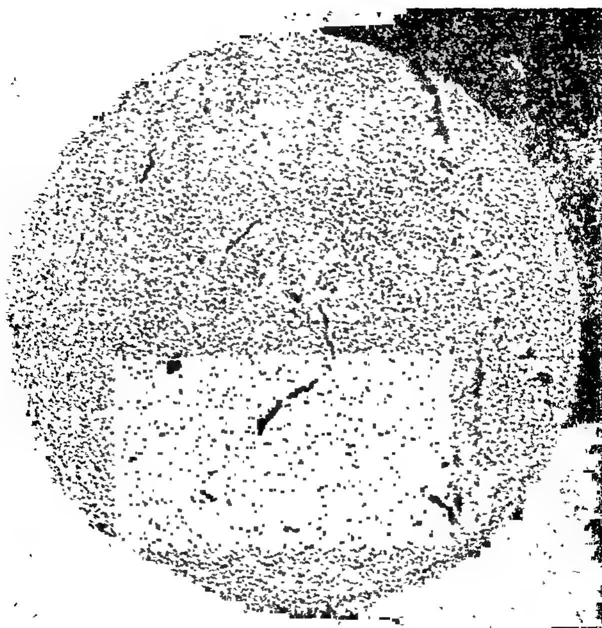
आरम्भमें जो पृथिवी-पिंड सूर्यसे अलग हुआ, वह गैस या वाष्पकी अवस्थामें था। लेकिन उसे तरल अवस्थामें आनेमें ५ हजार वर्षसे ज्यादा न लगा। तरलसे ठोस बननेमें १० हजार वर्ष और लगे। इस प्रकार आदिके १५ हजार वर्षोंको छोड़ प्रायः जन्महीसे पृथिवी ठोस है। भूतल की, उस आरम्भिक अवस्थाका वर्णन प्रोफेसर टाम्सनके शब्दोंमें—

"चारों ओर दिगन्तव्यापी तपती मरुभूमि है। उसपर गाढ़ा धुआँ फैला हुआ है। बालूके टीलोंको छोड़ वहाँ कोई दूसरा दृश्य नहीं। जहाँ-तहाँ दरारोंसे पिघली चट्टानें, मोटे दानेके अलकतरे (टार) सी, निकलकर फैली रही हैं। ठंडी होनेके साथ वह कड़ी होती तथा टूटती जा रही है और नीचेसे पपड़ियाँ निकलती आ रही हैं। वहाँ न दिनको सूर्य और न रातको चन्द्रमाका दर्शन होता है। आकाश बादलोंकी एक मोटी तहसे ढँका हुआ है। इन बादलोंके नीचे श्वास लेनेकेलिए अयोग्य धूल-मिली घनी हवा है, जिसमें कार्बन द्वि-आक्सित[2], भाप और अधिकतर नाइट्रोजन मिले हुए हैं। आज हमें प्राण देनेवाला आक्सिजन हवाका $\frac{1}{5}$ भाग है, उस वक्तकी वायुमें वह लेशमात्र था।"

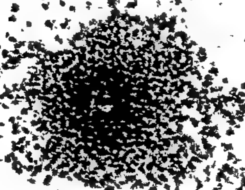
इसके बाद प्राणि, वनस्पति और मनुष्य पृथिवीपर कैसे पैदा हुए, इसे हम आगे बतलायेंगे।

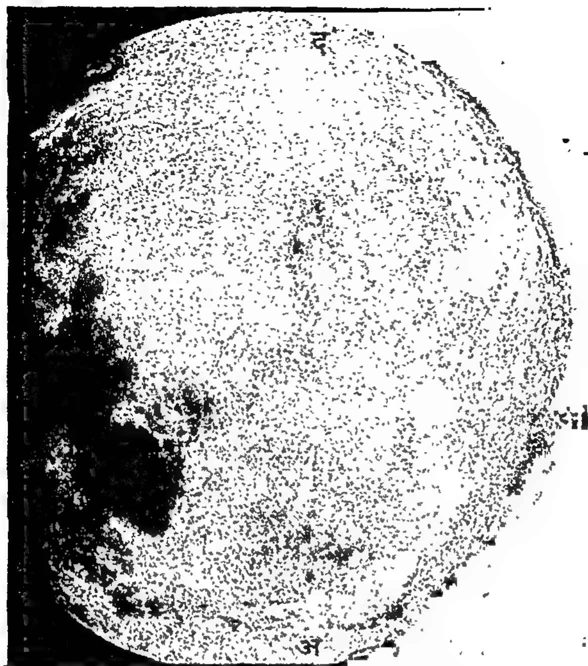
---

[1] Astroids. [2] Carbon dioxide.



फोटो चित्र १ (सूर्य, पृष्ठ १६)





फोटो चित्र ३ (चंद्रमा, पृ० २४)



फोटो चित्र ४ (मंगल, पृ० २७)

§ २. सूर्य

१. दूरी

सूर्य पृथिवीका ही जन्मदाता नहीं, पृथिवीकी सन्तानें—उसके प्राणी, वनस्पति—सूर्यकी किरणोंके सहारे ही जीते हैं, उसीके प्रकाश और तापसे दिन-रात, जाड़ा-बरसात, हिम-वर्षा होती हैं। सूर्यकी किरणें न हों, तो पृथिवीका तापमान इतना गिर जाय कि सभी तरल चीजें जमकर वर्फ हो जावें; यही नहीं बल्कि आँखोंसे न दिखाई देनेवाले अणुओंके भीतरकी भी गति बंद हो जावे, और असली अर्थमें दुनिया मृतक निस्तब्ध हो जावे।

सूर्य हमारी पृथिवीसे तेरह लाख गुना बड़ा है, यद्यपि वह देखनेमें चाँद जैसा छोटा मालूम होता है (फोटो चित्र १)। कारण उसकी दूरी है, जो ६ करोड़ तीस लाख मील है और जिसे पार करनेमें प्रकाश-किरणोंको, अपने ३.० करोड़ मीटर या १ लाख ८६ हजार मील प्रतिघंटेकी चालसे ८ मिनट लगाने पड़ते हैं। इस दूरीको हम जरीब से नहीं नाप सकते, इसके नापनेके दूसरे तरीके हैं। किसी त्रिभुजका एक भुज और दो कोण यदि मालूम हों, तो उस त्रिभुजकी बाकी भुजाएँ, उनपरके लम्ब और क्षेत्रफल मालूम करना आसान काम है। त्रिकोणकी एक भुजाके लिए हम पृथिवीपर दूरके दो स्थानों—उदाहरणार्थ लंदन और केपकालोनी (दक्षिणी अफरीका)—के बीचके फासलेको लेते हैं। हमारी नापमें यदि गलती होनेका ज्यादा डर है, तो इसी दूरीमें, जो कि अधिकांश हमारी "जरीबों द्वारा" नापी हुई है। सूर्यकी दूरी बहुत ज्यादा है, इसलिए पहिले हम उसमें हाथ नहीं लगाते। पृथिवी और मंगलकी कक्षाओंके बीच किसी टूटे ग्रह-पिंडसे बने शिशुग्रहोंका हम जिक्र कर चुके हैं। इन्हीं शिशुग्रहोंमें एकका नाम एरोस् है। **एरोस्**की कक्षा (व्यास साढ़े सत्ताइस करोड़ मीलके करीब) अंडाकार किन्तु बहुत पतली है, जिसकी वजहसे वह कभी-कभी मंगल और बुध जैसे पड़ोसी कक्षावाले ग्रहोंसे भी हमारे ज्यादा नजदीक आ जाता है। हम उक्त भुजाके दोनों सिरों—केप-कालोनी और लंदन—से एरोस्को मिलानेवाले त्रिभुजके दो कोणोंको

नापते हैं। इन दोनों कोणों तथा केप-लंदन भुजासे एरोस्की दूरी हिसाब करके मालूम कर सकते हैं। अब एरोस्की और पृथिवीकी स दूरी (एक करोड़ बासठ लाख मील जो कि १९३१ ई०में नापी गई)को त्रिभुजका एक भुज मान दो कोणोंके नापके साथ त्रिभुज-सिरपर स्थित सूर्यकी दूरी नापी जा सकती है। १९०१ ई०में एरोस् पृथिवीसे तीन करोड़ मीलपर आया था, उसी वक्तकी नापसे सूर्यकी दूरी ऊपर दी गई है।

२. विस्तार और घनता

सूर्यका व्यास पृथिवीके व्यास (७९१३ मील)से सौ गुना बड़ा (८,६४, ३६७ मील) है। मात्रा[1]में वह पृथिवीसे तीन लाख तेरह हजार गुना बड़ा है। उसका गुरुत्वाकर्षण पृथिवीसे अट्ठाईस गुना है, अर्थात् पृथिवीपर जो चीज १ मन होगी, वही सूर्यपर (उसके पिंडके आकर्षणके कारण बढ़कर) १८ मन हो जावेगी। वैसे सूर्यका पिंड वाष्पीय (=गैस) अवस्थामें है, किंतु उसकी घनता पानीसे ३० गुना (पृथिवीके निम्नतम गर्भकी घनता ५½ गुना) है। परमाणुके प्रकरणमें मालूम होगा कि ठोस कहे जानेवाले पदार्थो के भी परमाणु बहुत अधिक खोखले हैं। भारी दबावके कारण उनके भीतरके एलेक्ट्रन[2] अपनी कक्षाओंको संकुचित करने पर मजबूर होते हैं और इस प्रकार वाष्पीय अवस्थामें भी सूर्यकी घनता पानीसे ३० गुनी हो सकती है।

पृथिवीसे तुलना करनेपर सूर्य-पिंड बहुत विकराल मालूम होगा, किन्तु अपनी बिरादरीके दूसरे तारोंसे मुकाबिला करनेपर वह एक मध्य श्रेणीका तारा है—आर्द्रा[3] उससे २९० गुना, ज्येष्ठा[4] ४८० गुना बड़ी हैं।

३. तापमान

सूर्यकी गरमीका अन्दाज तो हमें कुछ इससे भी मालूम हो सकता है, कि उसकी किरणें ९ करोड़ ३० लाख मील चल और बिखरकर आती हैं, तो भी गर्मियोंमें वह हमारे लिए असह्य हो जाती हैं—जैकबाबाद, मुल्तान

[1] Mass.　[2] Electron.　[3] Betelgeuse.　[4] Antares.

जैसी जगहोंपर टेम्परेचर १२०° फा० तक चला जाता है। साधारण आग्नेय शीशेसे किरणोंको संचितकर हम कागज, रुई या लकड़ीमें आग लगा सकते हैं। मिश्रमें बड़े-बड़े शीशोंकी मददसे पानीको भाप बना इंजन तक चलाए जाते हैं। सूर्यके ऊपरी तलपर उसका तापमान ६०००° सेंटीग्रेड है; किन्तु भीतरी केन्द्रपर वह ५ करोड़ डिग्री है। इस गर्मीके प्रभावका अन्दाजा हम इसीसे लगा सकते हैं, यदि एक छै इंची तोपका गोला उतना गर्म किया जाये, तो उसके आस-पास पचास मील तक कोई जीव-धारी जी नहीं सकता। कड़ीसे कड़ी धातु ताँबा १०८३° सें०में पिघलता और २३१०°में भाप बन जाता है, प्लेटिनम्के पिघलानेको १७५७° से १८५५° सें०की आँच आवश्यक होती है। ताप तैयार करनेके लिए जिस प्रकार कोयले या काष्ठको जलना पड़ता है, अपने शरीर को तापके रूपमें परिणत करना पड़ता है, उसी प्रकार सूर्यको भी अपने चारों तरफ ताप और प्रकाश भेजनेके लिए शरीरके कुछ भागको निरन्तर खर्च करना पड़ रहा है। इस खर्च होनेवाले भागका परिणाम ५० लाख टन (१४ करोड़ मन) प्रति सेकेंड है। इतना भारी व्यय सूर्य जैसे बड़े शरीरका धनी ही पाँच अरबों[1] वर्षोंसे करता चला आ सकता है, और इस हिसाबसे वह १२५ अरब वर्ष तक और चल सकता है। इस भारी दानमें हमारी पृथिवीको सिर्फ १६८ टन प्रति सेकेंड मिलते हैं।

४. सूर्यका अक्षय भंडार

सूर्य अपने इस भारी व्ययको उपरोक्त कालसे भी अधिक समय तक कर सकता है, क्योंकि उसके पास शक्ति और शक्ति-उपादान तैयार करनेकी "पारस मणि" है; जिससे वह प्रति मिनट वर्गमील प्रत्येक क्षेत्रपर $\frac{१}{१०,०००}$ औंस ($\frac{१}{४०००}$ तोला), प्रकाश, तथा ०.००,००,००,००,०४ वायुमंडलीय दबावको दे सकता है।

---

[1] Billion.

सूर्य अरबों वर्षोंसे अपने शरीरका भाग १५ करोड़ मन प्रति सेकेंडके हिसाबसे जलाकर नष्ट कर रहा है। क्या इस दानका परिणाम कुछ समयमें उसे निःशेष बन जाना है, या उसकी आमदनीका कोई और रास्ता भी है? यह ख्याल है जिसपर वैज्ञानिकोंका दिमाग देरसे चक्कर काट रहा है। कोर्नेल विश्व-विद्यालयके प्रोफेसर एच० ए० बेथने इसका एक हल पेश किया है। वह बतलाते हैं कि कैसे हाइड्रोजनको भिन्न-भिन्न परमाणुओंके रूपमें परिणत करके साढ़े पैंसठ लाख (शुरूमें उन्होंने ५ करोड़ वर्ष बतलाया था) वर्षके बाद सारी क्षतिकी पूर्ति कर सूर्य फिर पहिली अवस्थामें आ जाता है। उन्होंने इस तत्त्व-परिवर्तन युगकी छै अवस्थाएँ बतलाई हैं, जिनमें कार्बन निम्न रीतिसे दूसरे परमाणुओंके रूपमें बदल जाता है—

प्रथम अवस्था—सूर्यके केन्द्रीय तापमान ५ करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड और बाहरी तलका ६०००° बतला रहा है, कि वह कितनी प्रचंड उष्णता रखता है। इस उष्णतामें हाइड्रोजनका अत्यन्त उत्तेजित होना जरूरी ठहरा। इस उत्तेजनाके परिणाम-स्वरूप हाइड्रोजनका नाभिकण—प्रोटन—प्रहार करके कार्बनके हृदय (उसके छै प्रोटन और छै न्युट्रनवाले नाभिकण) में घुस जाता है। अब वहाँ छैकी जगह सात प्रोटन और छै न्युट्रन हो जाते हैं, जिनका परमाणुभार १३ होता है (यद्यपि वैसे उसका परमाणुभार १२ है), इस प्रकार कार्बन सात प्रोटन और छै न्युट्रनवाले नाइट्रोजन परमाणुका रूप लेता है।

दूसरी अवस्था—नाइट्रोजनके एक प्रोटनका एक घनात्मक कण जलकर निकल जाता है, जिससे फिर वह कार्बनके रूपमें आ जाता है, यद्यपि उसका भार १२ नहीं १३ रहता है। प्रोटनका घनात्मक कण निकल जानेपर वह न्युट्रनके रूपमें बदल जाता है। इस प्रकार सात प्रोटनकी जगह जहाँ एक घटकर छै रह जाते हैं, वहाँ न्युट्रनकी संख्यामें एककी वृद्धि होती है।

तीसरी अवस्था—हाइड्रोजन फिर इस १३ परमाणुभारवाले कार्बनपर प्रहार करता है; प्रोटन कार्बनके नाभिकणमें चला जाता है, और इस तरह १४ परमाणुभारका नाइट्रोजन—साधारण नाइट्रोजन—आ मौजूद होता है।

चौथी अवस्था—१४ परमाणु-भारवाले इस नवनिर्मित नाइट्रोजनपर

फिर हाइड्रोजनका प्रहार होता है, जिससे उसके नाभिकणमें एक और प्रोटन बढ़ता है, और अब वह १५ परमाणुभार (८ प्रोटन+७ न्युट्रन) वाले आक्सीजनके रूपमें उपस्थित होता है, यद्यपि यह साधारण आक्सीजन नहीं है—साधारण आक्सीजनका परमाणुभार १६ होता है।

पाँचवीं अवस्था—१५ परमाणुभारका आक्सीजन अपूर्ण होनेके कारण स्थिर नहीं होता, इसलिए उसके एक प्रोटनका एक धनात्मक कण निकल जाता है, जिससे वह प्रोटन न्युट्रन बन जाता है। इस प्रकार ७ प्रोटन+८ न्युट्रन नाभिकणवाला नाइट्रोजन आ मौजूद होता है।

छठीं अवस्था—हाइड्रोजन अन्तिम बार प्रहार करता है, और एक प्रोटनके बढ़नेसे नाभिकणमें ८ प्रोटन और ८ न्युट्रन हो जाते हैं, यही साधारण आक्सीजन है, जो कि सूर्य या हर एक तापका प्राण है।

यह नया परमाणु भी स्थिर होकर चुपचाप नहीं रह सकता। परिवर्तनके नियमका अपवाद कैसे हो सकता है? अब इसके नाभिकणके दो भाग होते हैं—एक २ प्रोटन+२ न्युट्रन अर्थात् हेलियम, और दूसरा ६ प्रोटन+६ न्युट्रन अर्थात् कार्बन। गणित द्वारा मालूम किए साढ़े पैंसठ लाख वर्षके बाद अब फिर उसी तापमानमें कार्बन हाइड्रोजनपर प्रहारके लिए मौजूद है। फिरसे वही चक्र शुरू हो जाता है। इस सारे चक्रमें प्रहार करनेवाले हाइड्रोजन परमाणु हेलियम्के रूपमें परिणत हो गए। उन्होंने अपने दो धनात्मक कण तथा कुछ शरीर-मात्राको खोया। यही खोई शरीर-मात्रा सूर्यतापके भंडारको भरपूर बनाए रखती है। डाक्टर बेथका कहना है, कि सूर्यमें हाइड्रोजनकी इतनी मात्रा है, कि अभी १२ अरब वर्ष तक उसे दीवालिया होनेका डर नहीं।

इन छओं अवस्थाओंमेंसे पहिली तीनकी परीक्षा प्रोफेसर बेथ और उनके सहयोगियोंने स्वयं कोर्नेलकी प्रयोगशालामें की। चौथी अवस्थाको केम्ब्रिजके डाक्टर करन और डाक्टर स्ट्रोदरके प्रयोगोंने सिद्ध किया। पाँचवींको डाक्टर बेथने स्वयं और छठवींको डाक्टर हालोवेकी सहायतासे प्रयोग-सिद्ध किया। अमेरिकन भौतिक शास्त्रीय सभाके सन्मुख उन्होंने

अपनी इस सफलताको २७ अप्रैल १९४१ ई०को प्रकट किया।

५. खगोलमें सूर्यका स्थान, कक्षा और गति

स्वच्छ आकाशमें आकाशगंगाकी कटिमेखला, सफेद बालूसे ढके रास्तेकी भाँति रातको दिखलाई पड़ती है। आकाशगंगाके भीतरी धरातलके बीचसे जरासा हटकर हमारे सूर्यका स्थान है। आकाशगंगाके तारोंमें अपने आकार और प्रकाशसे सूर्यकी कोई खास महत्ता नहीं है। सूर्य और उसके पड़ोसी तारोंका एक अपना छोटा-सा संसार है, जिसे एक ख्यातनामा ज्योतिषीके नामपर काप्टेन[1] विश्व कहा जाता है। यह हर्कुल[2] (फोटो चित्र २) नक्षत्रपुंजका एक अंश है। ग्रहोंकी भाँति सूर्यका भी एक अपना भ्रमण-पथ या कक्षा है, जिसपर वह दो या तीन सौ किलोमीतर प्रति सेकेंड (प्रायः ६७ हजार मील प्रति घंटे)की चालसे (पृथिवीकी चाल ६५ हजार मील) चल रहा है। उसका रुख अभिजित्[3] नक्षत्रकी ओर है। सौर-परिवारका सबसे दूरका नक्षत्र प्लूटो (यम) उससे ३ अरब ७० करोड़ मील दूर है; गोया हमारे सूर्यके राज्यकी लम्बाई ७ अरब ४० करोड़ मील है। सूर्य अपने उस केन्द्रके गिर्द इस सारे परिवारके साथ ६७ हजार मील प्रति घंटेकी चालसे जो दौड़ लगा रहा है, उसका यह वेग ही इतना जबर्दस्त है, कि उसके झोंकसे भीतरकी किसी चीजका बाहर निकलना मुश्किल है।

सूर्य भी और तारोंकी भाँति कुंडलिनी या चक्करदार नीहारिकाओं[4]-के बिखरे हुए तत्त्वोंके घने होनेसे बना है, यह हम आगे बतलायेंगे।

§ ३. चन्द्रमा

सौर-परिवारके बारेमें कहनेसे पहिले यहाँ हम अपनी पृथिवीके उपग्रह चन्द्रमाके बारेमें भी कुछ कह देना चाहते हैं। मनुष्य जातिको चन्द्रमाका परिचय सबसे पहिले हुआ। आदिम मनुष्यको अन्धकारसे सबसे अधिक भय था। अँधेरी रातमें काल्पनिक भूत-प्रेतसे ही नहीं अपने सजीव शत्रु

---

[1] Kapteyn. [2] Hercules. [3] Vega. [4] Spiral nebulae.

मनुष्य या हिंस्रक पशुओंसे उसे हर वक्त खतरा रहता था। चाँदनी रात बहुत हद तक उसे इस भयसे मुक्त करती थी। मछली और जानवरोंके शिकार, फलोंके चुनने और रेवड़ोंकी देख-भालमें रातके वक्त चन्द्रमा उसका भारी सहायक था। इस प्रकार चन्द्रमा आदिम मनुष्यके बड़े सन्मानका भाजन बन गया; इसका पता इससे भी मालूम होता है, कि भारतीय आर्योंकी पुरानी पुस्तक ऋग्वेदमें इन्द्रके बाद चंद्रमा (सोम) ही है, जिसकी प्रशंसामें सबसे अधिक मंत्र (स्तुतियाँ) लिखे गए हैं। लेकिन, चन्द्रमाके वास्तविक रूपके बारेमें उनका ज्ञान शून्यसा था। वैदिक ज्ञानसे आगे बढ़े हुए उपनिषद्के ऋषि चन्द्रमाको सूर्यसे भी दूर[1] मानते थे। लेकिन इस तरहके विचारको लुप्त करनेके लिए गलेलियोकी पहिली दूरबीन (१६१२ ई०) ही काफी थी।

चन्द्रमा समुद्रके ज्वार-भाटेका कारण है। अधिक समीप रहने तथा सूर्यकी आकर्षणशक्तिकी सहायता पा वह समुद्रजलको बहुत ऊँचा उठा देता है। यह भी एक कारण था, जो कि समुद्र-तट-वासियोंका ध्यान अपनी ओर आकर्षित किए बिना नहीं रह सकता था।

चन्द्रमा हमारा सबसे नजदीकका आकाशीय पड़ोसी है। वह पृथिवीसे २,३८,८४० मील (२,५२,६७२ मील दूरतम, २,२१,६१४ मील समीपतम) दूर है। उसका व्यास २२०० मील अर्थात् पृथिवीके व्यासका एक चौथाई, और पिंड पृथिवीके पिंडका पचासवाँ हिस्सा है। इसका अर्थ है—जो आदमी पृथिवीपर सौ सेर होगा, वह चन्द्रमंडलमें हलका होकर सिर्फ दो सेर रह जावेगा, यद्यपि उसके शरीरके भीतरके अणु-परमाणु उतने ही रहेंगे। गुरुत्वाकर्षणकी कमी भी चन्द्रमाके वायु-मंडलको जल्दी सुखा देनेमें बहुत सहायक हुई। आज वहाँ न वायु-मंडल है, न बादल हैं, न किसी प्रकारके जीवधारी हैं। वायुमंडलके अभावसे एक लाभ यह है, कि हम अपने पड़ोसीका अच्छी तरह निरीक्षण कर सकते हैं। चन्द्रमाके भीतरकी चरखा कातनेवाली बुढ़िया या हिरन बहुत प्रसिद्ध

---

[1] देखो 'दर्शन-दिग्दर्शन' पृष्ठ ४६१ (बृहदारण्यक ३।६।१)।

हैं, यद्यपि बहुतसी कहावतोंकी भाँति वह सत्यपर अवलंवित नहीं है ।

यदि हम यहाँ वैठे-वैठे चंद्रलोककी सैर करना चाहते हैं, तो यह बहुत मुश्किल काम नहीं है । विश्वविद्यालयों और कितने ही कालेजोंमें ३, ४ इंची दूरवीन होते हैं । उनसे देखने पर वह अपने व्याससे दो सौ गुना वड़ा दिखलाई पड़ेगा, और उसके पहाड़, मैदान, "ज्वालामुखियाँ" साफ दिखलाई पड़ेंगी । अधिक शक्तिवाले दूरवीनोंसे हम २३८ हजार मीलकी दूरीको कमकर उसे २४० मीलपर ला सकते हैं, और उसके व्यासको हजार-गुना वढ़ाकर देख सकते हैं । उस वक्त उसके पहाड़ोंकी घनी छायाको भी हम देखते हैं । वायु-मंडलके अभावके कारण चंद पर्वतोंकी छाया वहुत घनी और स्पष्ट किनारोंवाली दीखती हैं । चाँदके देखनेके लिए पूर्णिमाके आगे-पीछेके दो तीन दिन ज्यादा अच्छे होते हैं, क्योंकि उस वक्त चन्द्रमंडलको प्रकाशित करनेवाली सूर्यकिरणें उसपर तिरछी पड़ती हैं । अपनी खास गतिके कारण चन्द्रमाका करीव-करीव वही (५९ सैकड़ा) भाग सदा दिखलाई पड़ता है, और कुछ भाग सदाके लिए हमसे ओझल रहता है ।

चंद्रमाकी दुनिया एक सूखी और सर्द दुनिया है । वहाँ पानीके समुद्रोंका पता नहीं है । सवसे विचित्र वात जो वहाँ देखनेमें आती है, वह है चहार-दीवारीसे घिरे गोल-गोल वाड़े जैसे 'ज्वाला-मुख' । अवतक ३३ हजार 'ज्वालामुख' गिने जा चुके हैं, जिनमें हजार तो नौ मीलसे ज्यादा चौड़े हैं, इनमें कुछ वस्तुतः ज्वालामुख हैं, और उनके पासकी दीवारें गर्भसे निकले लावासे वनी हैं । कितनोंके वारेमें अनुमान किया जाता है, कि वे चन्द्रमापर गिरे विशाल उल्कोंसे वने गड्ढे हैं, हमारी पृथिवीपर 'अरिजोना' (अमेरिका) और सिवेरियामें ऐसे गड्ढे मौजूद हैं । ज्वालामुखियोंके अतिरिक्त वहाँ मैदानों, पहाड़ों, घाटियों और सूखे समुद्रोंके उदरोंकी कमी नहीं है इनमें वहुतोंका नामकरण भी कर डाला गया है । चंद्रलोकका सवसे गहरा गड्ढा न्युटन ज्वालामुख है, जिसकी एक दीवार २३,९०० फुट (प्रायः ४½ मील) ऊँची है । सवसे ऊँची चोटी उसके दक्षिणी ध्रुवके पास डोरफेल पर्वतशृंखलाकी है, जिसकी ऊँचाई २६,००० फुट या प्रायः ५ मील है ।

चन्द्रलोकके खास-खास दर्शनीय चीजें हैं (फो० चित्र ३)—
कोपर्निकस 'ज्वालामुख'—उत्तर-पूर्व अ
अर्चिमिद 'ज्वालामुख'—उत्तर-पूर्व ब
प्लेटो 'ज्वालामुख'—उत्तर-पूर्व स
ताइचो 'ज्वालामुख'—पूर्व-दक्खिन-पूर्व द
इम्ब्रियस् 'समुद्र'—उत्तर-पूर्व
नुवियम् 'समुद्र'—दक्खिन-पूर्व

§ ४. सौर-परिवार

१. ग्रह[1]

दूरबीनके आविष्कारसे पूर्व पृथिवीके अतिरिक्त, शुक्र, बुध, मंगल, बृहस्पति और शनि पाँच ही ग्रह हमें मालूम थे। दूरबीनके आविष्कारके बाद नापनेके दूसरे भी बारीक यंत्र बने, गणितने भी और उन्नति की, और वरुण[2] नेपचूं और प्लूटो (यम) तीन और ग्रहोंका पता लगा। बहुत दूर होनेसे यह ग्रह आकाशमें इतने छोटे थे, कि इन्हें नंगी आँखोंसे देखा नहीं जा सकता था; किन्तु ज्योतिषियोंको गणितकी कठिनाइयोंसे सन्देह हो रहा था, कि बाहर और ग्रह हैं, जिनका आकर्षण ज्ञात ग्रहोंपर काम कर रहा है। सौर-परिवारका सबसे दूरस्थ तथा सबसे पीछे (१९३० ई०में) ज्ञात हुआ ग्रह प्लूटो[3] है। यह परिवार इतनी दूर तक फैला हुआ है, कि जहाँ सूर्यका प्रकाश (१८६ हजार मील प्रति सेकेंडकी चालसे) पृथिवी तक आठ मिनटमें पहुँचता है, वहाँ उसे प्लूटो तक पहुँचनेमें ४ घंटे लगते हैं। कुछ विद्वानोंकी राय है, कि प्लूटोसे बाहर भी अभी एक दर्जन ग्रह हो सकते हैं; इसलिए समीपतम तारेको ४ वर्ष दूरकी मंजिलपर पा हमें इससे आश्चर्य नहीं होना चाहिए। सूर्यके ग्रहोंके पिंड, कक्षा आदिका विवरण इस प्रकार है—

---

[1]देखो मंगल, बृहस्पति और शनिके फोटो-चित्र ४,५,६। [2] Uranus.
[3] प्रो० बदरीनाथ प्रसादका लेख (सरस्वती, फर्वरी १९३४, पृ० १९१-९५)।

पिंड	सूर्यसे दूरी (लाख मील)	व्यास (मील)	मात्रा (पृथिवीसे गुना)	ताप (सेंटीग्रेड)	धुरीपर घूमना			कक्षाभ्रमण (दिन)
					घंटा	मिनट	सेकंड	
सूर्य	—	८,६४,३६७	३,३२,०००	६०००°	२५	७	४८	—
शुक्र	३६०	३००८	०·०५	३५०°		२५	४२	८८
बुध	६७२	७६००	०·८२	—२५°		२३	२१	२२५
पृथिवी	९३०	७९१३	१·००			२३	५३	३६५¼
एरोस्	१३५०							६४३
मंगल	१४१५	४२१५	०·९९	१०° / —७०°		२४	३७½	६८७
बृहस्पति	४८३३	९०२५४ ध्रुव, ८४७७८ मध्य	३१८	—१४०		७	५०	४३३२
शनि	८८६०	७५१०० ध्रुव, ६७२०० मध्य	९५	—१५०		९	५६	१०७५९
वरुण	१७८२८	३१९००	१५	—१८०°		१०	३८	३०६८७
नेपचून	२७९३८	३३०००	१७	—२००°		१०	४९	६०१८१
प्लूटो	३७०००			—२४०°				

२. गुरुत्वाकर्षण

न्यूटनने पहिले-पहिल पता लगाया, कि आकाशीय पिंड एक दूसरेके आकर्षणसे अपनी कक्षापर अवस्थित रहते भ्रमण कर रहे हैं। विजली, चुम्बक और प्रकाशको एक जगहसे दूसरी जगह जानेमें देर लगती है, किन्तु आकर्षण शक्तिकी यह विशेषता है, कि उसे एक स्थानसे दूसरे स्थानमें जानेमें समय नहीं लगता, पिंडके साथ वह वहाँ मौजूद है। दूसरी विशेषता यह है कि प्रकाशको पर्देसे रोका जा सकता है, विजली, चुम्बक और एक्स-रेके भी ओट हैं, जिनके बीचमें आनेसे उनका प्रवाह रुक जाता है; किन्तु गुरुत्व-आकर्षणके रास्तेमें कोई ओट नहीं डाला जा सकता। आगे हम वतलायेंगे कि जवतक हमारे अन्वेषणका विषय सौर-परिवार था, तव तक गुरुत्वाकर्षणके मान लेनेमें कोई हर्ज नहीं था, किन्तु जब हम सूर्यसे तारोंकी ओर वढ़ने लगे, तो उसमें दोष निकलने लगे, और अन्तमें आइन्स्टाइनने अपने सापेक्षतावादके सिद्धान्तमें वतलाया, कि जिसे न्यूटनने गुरुत्वाकर्षण समझा, वह वस्तुतः लाखों मील घंटेकी चालसे चलनेवाले आकाशीय पिंडोंका झोंक है। ये पिंड रेलकी ट्रेनकी भाँति अपने पासके आकाशको भी झोंकके रूपमें लिए दौड़ रहे हैं।

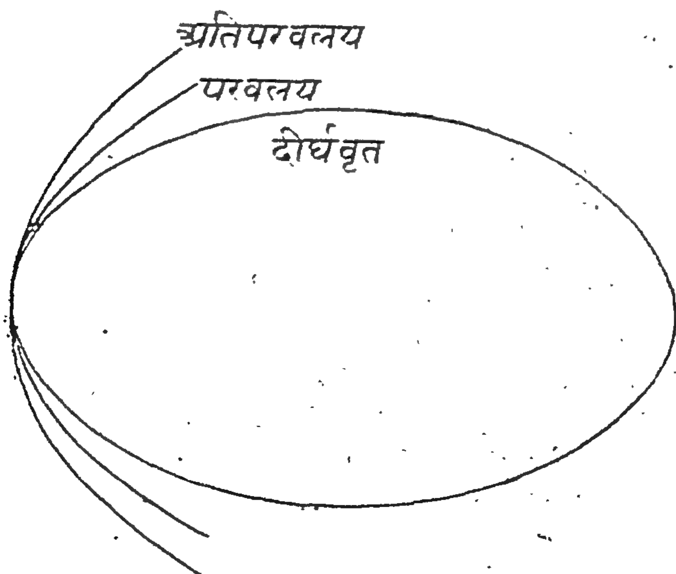
आगे हम वतलायेंगे कि जीवन ०° (हिमविन्दु)से १००° सेंटीग्रेड (उवालविन्दु)के भीतर ही रह सकता है। शुक्र जीवधारियोंके वसने लायक नहीं है। उसका सिर्फ एक पार्श्व सदा सूर्यके सामने रहता है जिससे वह ३५०° सेंटीग्रेड गर्म है। दूसरा पार्श्व तो सूर्यके प्रकाशसे वंचित होनेके कारण अत्यन्त शीतल होनेसे ही जीवनके लिए अनुपयुक्त है। मंगल ही एक ऐसा ग्रह है, जिसका मध्यम ताप १०° है, और वहाँ जीव-धारियोंके होनेकी संभावना हो सकती है। वाकी सभी ग्रह हिमविन्दुसे वहुत नीचेकी सर्दी रखते हैं, अतः वे इसके लिए अयोग्य हैं। जीवन, मालूम होता है, विश्वमें वहुत दुष्प्राप्य वस्तु है।

३. धूमकेतु

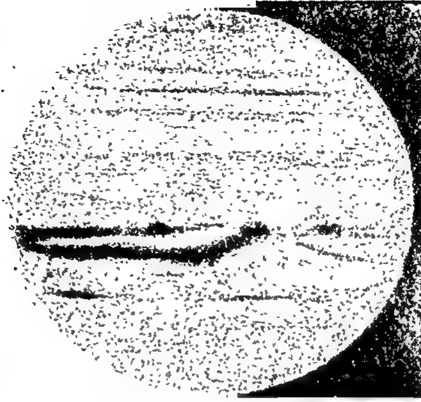
ग्रहोंके वाद सौर-परिवारके दूसरे वड़े सदस्य हैं धूमकेतु। वहुत पुराने

समयसे झाड़ूसी लंबी पूँछ देखकर लोगोंका ध्यान इनकी ओर आकर्षित हुआ। सभी देशोंमें इन्हें अनिष्टसूचक समझा जाता रहा। धूमकेतुओंकी संख्या उससे कहीं ज्यादा है, जितना कि हम देखते हैं। पाँचमेंसे सिर्फ एक केतु नंगी आँखोंसे देखा जा सकता है। न्युकम्बने हिसाब लगाकर बतलाया है, कि १५०० ई०से १८०० ई०के बीच ७९ धूमकेतु नंगी आँखोंसे देखे गए होंगे। डेनिंगके हिसाबसे १८५०ई० से १९१५ ई०के बीच नंगी आँखोंसे देखे जानेवाले कमसे-कम ७८ केतु उगे थे। इससे प्रतिवर्ष एक बड़े धूमकेतुकी औसत पड़ती है। १९११ ई० जैसे कुछ ऐसे भी साल होते हैं, जिनमें चार-चार धूमकेतु उग आते हैं।

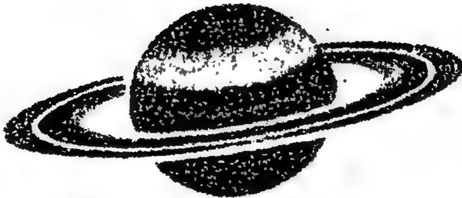
धूमकेतुओंमें कुछ तो ऐसे हैं, जो कि हेली, टेम्पुल जैसे धूमकेतुओंकी भाँति ७६ या ३ वर्षोंके बाद अपनी कक्षापर भ्रमण करते हुए फिर हमारी



चित्र ६



फोटो चित्र ५ (वृहस्पति, पृ० २७)

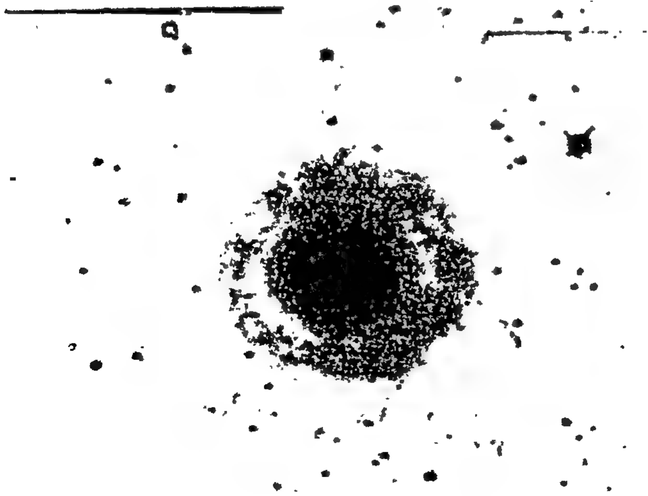


फोटो चित्र ६ (शनि, पृ० २७)





फोटो चित्र ७ (धूमकेतु, पृ० ३१)



फोटो चित्र ८ (द्वीप-विश्व, पृ० ४५)

आखोंके सामनेसे गुजरते हैं। इनकी कक्षाएँ बहुत लंबे दीर्घवृत्त (अंडाकार) हैं, जो कि सूर्यके पाससे शुरू हो सारे ग्रहोंकी कक्षाको पारकर दूर तक फैली हैं। कुछ केतुओंकी कक्षाएं परवलय[1] या अतिपरवलय[2]की शकलकी होती हैं (चित्र ६) और उनके केतु सौर-जगत्के बाहरके वासी हैं, सिर्फ सूर्यके आकर्षणसे हमारे जगत्में भटककर चले आते हैं।

धूमकेतु पहिले-पहिल कुहरेका गोलपिंड-सा दिखाई पड़ता है। जैसे-जैसे वह सूर्यके पास आता है, उसकी शकल बदलती जाती है। उसका सारा शरीर शिर, बुंदा और पूँछमें बटा होता है। बुंदा शिरके बीचमें अधिक चमकीला-सा दीख पड़ता है। शिरसे कुहरेकी धाराकी भाँति एक पूंछ सूर्यसे विरुद्ध दिशाकी ओर फैली रहती है। जब केतु सूर्यके समीपसे गुजरकर आगे बढ़ता है, तो पूंछ आगे और सिर पीछे चलने लगता है—पूंछ सदा सूर्यसे उल्टी दिशामें रहती है (फोटो चित्र ७)।

धूमकेतु छोटे बड़े सभी प्रकारके होते हैं। पूँछकी लंबाई किसीकी कुछ ही लाख मीलकी होती है, किन्तु किसी-किसीकी लंबाई पृथिवी-सूर्यकी दूरीसे भी ज्यादा (१८११के केतुकी दस करोड़ मील) होती है। एक केतुका शिर हमारे परिवारके सबसे बड़े ग्रह बृहस्पतिके पिंडसे ३५० गुना बड़ा था। इतने विशालकाय होनेपर भी केतुओंकी पिंड-मात्रा बहुत कम होती है; यह इसीसे मालूम होता है, कि अनेक वार कितनोंको पृथिवी या किसी दूसरे ग्रहके पिंड या कक्षाके पाससे गुजरते देखा गया, किन्तु उनका कोई प्रभाव ग्रह या उसकी कक्षापर नहीं पड़ा—१७७० और १८८६में कुछ केतु बृहस्पतिके उपग्रहोंसे होकर गए थे, किन्तु उनपर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। जून १९२१में पृथिवी योन्स विन्नेक धूमकेतुसे टकराते-टकराते बची। ऐसे ही टक्करका परिणाम अरिजोना (अमेरिका) का वह गड्ढा मालूम होता है, जिसकी शकल चन्द्रलोकके ज्वालामुखोंसे ज्यादा मिलती है और जो पौने मील व्यासका है। इसके पास बहुतसे उल्काके लोहे पाये गए हैं। पृथ्वीका

---

[1] Parabola. [2] Hyperbola.

बाहरी खोल १० करोड़ वर्ष पुराना है, इतने समयके भीतर सिर्फ एक टक्कर होना जल्द होनेवाली घटना नहीं कही जा सकती। विशाल होने पर भी धूमकेतु पृथिवीकी मात्रासे $\frac{१}{१००००००}$ से बड़े नहीं होते, किन्तु इतनेपर भी उनका वजन अरवों मनका होता है। पृथिवीसे गुजरनेपर शायद धूमकेतुओंकी गैस कुछ नुकसान पहुँचाये, किन्तु उसकी घनता बहुत कम होती है।

४ उल्कापिंड

अक्सर रातको हम टूटते तारोंको देखते हैं। जब कोई आकाशीय पिंड बाहरसे पृथिवीके आकर्षणसे खिंचकर २६ मील प्रतिसेकेंडकी चालसे हमारे वायुमंडलमें घुसता है, तो हवाका घर्षण उसपर इतना तीव्र होता है, कि वह जल उठता है। अधिकांश उल्का पृथिवी तक पहुँचनेसे पहिले ही जलकर अपनी राखको हवामें बिखेर खतम हो जाते हैं, कभी-कभी उनकी राख हमें पड़ी मिलती है। ऐसा अवसर तो बहुत कम होता है, जब कि कोई ठोस उल्का-धातुपिंड जमीनपर आ पड़ता है। काबाका सबसे पवित्र पत्थर "अस्वद्" इसी तरहका एक उल्का पाषाण है। १ मई १८६० ई०को गर्नसी जिले (ओहायो, अमेरिका)में एक उल्कापात हुआ। एक जोरका धड़ाका हुआ, फिर दो पत्थर गिरकर जमीनमें धँस गए। वहाँ आसपासके दस मील लंबे, ३ मील चौड़े प्रदेशमें ३०से अधिक उल्काखंड पाए गए। उनमें सबसे बड़ेका वजन १०३ पौंड (१ मनसे अधिक) था। २५ जून १८६० ई०को कन्सास् (अमेरिका)में कितने ही दर्शकोंने उल्कापात होते देखा। भारी धड़ाका हुआ और एक बड़ी धुएँकी पाँती खड़ी हो गई। इसका सबसे बड़ा टुकड़ा धरतीमें ४ फीट धँस गया था, और तौलनेपर उसका वजन १८० पौंड (दो मनसे ऊपर) पाया गया। १६०८में सिबेरियामें जो उल्कापिंड गिरा था, उसने सैकड़ों मीलके जंगलमें आग लगा दी, और उसके कारण हुए भूकम्पका पता दूर तक लगा।

§ ५. तारे

१. तारा संख्या

निरभ्र रात्रिमें आकाशमें बिखरे तारोंको देखकर हम कह उठते हैं—इनका गिनना उतना ही मुश्किल है, जितना कि गंगाके वालुकणोंका गिनना। लेकिन वात दरअसल ऐसी नहीं है। अच्छी आँखवाला आदमी सिर्फ ४७ सौ तारोंको साफ तौरसे देख सकता है, और इनमेंसे आधे ही एक समय क्षितिजके ऊपर रहते हैं। तारोंके गिनने, पहिचानने और नामकरणका प्रयास कई जातियोंने किया। हिन्दुओंने तारोंको एक दूसरेसे मिलाकर बननेवाली आकृतियोंके नामसे उन्हें अश्विनी आदि सत्ताईस या अट्ठाईस नक्षत्रोंमें बाँटा। ये सत्ताईस नक्षत्र वे ही तारे हैं, जो कि पृथिवीकी गतिके उलटा समझनेपर चलते दिखाई देनेवाले सूर्य और चाँदके पथपर पड़ते हैं। चाँदनी और अँधेरी रातों तथा ऋतुओंके परिवर्तनके ज्ञानके लिए उन्हें यह जानना ज़रूरी था, कि सवेरे आश्लेषा ताराके पास सूर्यके उगनेपर हम वर्षा ऋतुके मध्यमें रहते हैं। इनके अतिरिक्त ध्रुवतारा (जो असली अचल ध्रुव विन्दुपर नहीं उसके पास है) सप्त-ऋषि, प्रजा-पति, ब्रह्महृदय, लुब्धक, अगस्त्य आदि कुछ और तारे हैं, जिन्हें उन्होंने पहिचाना था। हिन्दुओंसे भी पहिले इस क्षेत्रमें अवतीर्ण होनेवाले काल्दिया (मेसोपोतामिया) के लोग थे। उन्होंने तारों, राशियों, सूर्य-चन्द्र-ग्रहणकी कई वातें पहिले-पहिल खोज निकाली थीं। मेष आदि वारह राशियाँ उन्होंने ही पहिले जारी कीं। उनसे यह ज्ञान घूमता हुआ यूनान पहुँचा, और यूनानियोंसे हिन्दुओंने सीखा।

तारोंकी सूची वनानेका पहिला प्रयास तालमीने १३७ ई०में किया। उसने १०२५ तारोंका निर्देश किया है। समरकंदके मंगोल शासक उलुग वेगकी प्रेरणासे एक सूची १४५० ई०में वनी थी। १५८० ई०में ताइचो व्रेहेने एक तारा-सूची तैयार की, जिसमें १००५ तारे थे। तालमी और व्रेहे दोनोंका उतने ही तारोंकी सूची वनाना वतलाता है, उनकी आँखोंकी

ताकत समान थी, और नंगी आँखोंसे इतने ही तारोंका निरीक्षण-परीक्षण किया जा सकता है। दूरवीनके आविष्कारके बाद देखे जानेवाले तारोंकी संख्या बहुत बढ़ गई, और फोटोग्राफीके बाद तो उनका गिनना भी आसान हो गया। साधारण दूरबीनसे देखनेपर तारोंकी संख्या ५० हजार तक पहुँच जाती है। २½ इंची दूरबीनसे अर्जलेण्डरने तीन लाख तारोंका निरीक्षण किया। विल्सन गिरि (कलेफोर्निया) पर स्थापित दुनियाकी सबसे बड़ी दूरबीन—जिसके लेन्सका व्यास १०० इंच है—से डेढ़ अरब तारोंका फोटोग्राफ लिया जा सकता है। अमेरिकाके प्लोमर गिरिपर स्थापित की जानेवाली २०० "ची दूरबीन जब तैयार हो जायेगी, तो इस संख्यामें कुछ अरब तारोंकी और वृद्धि होगी, और चन्द्रमाको तो वह २५ मीलपर ला छोड़ेगी।

प्रकाशके अनुसार तारोंको कई वर्गोंमें बाँटा गया है। पहिले दूसरे, तीसरे वर्गके तारे ज्यादा चमकीले हैं, किन्तु उनकी संख्या बहुत कम (क्रमशः १९ और ६५ और २००) है। सातवें-आठवें वर्ग तकके तारोंको खाली आँखों से देखा जा सकता है। चौथे वर्गसे आगेके तारोंकी संख्या इस प्रकार है—

वर्ग	संख्या	वर्ग	संख्या	वर्ग	संख्या
४	५३०	१०	३,२४,०००	१६	७,१०,००,०००
५	१,६२०	११	८,७०,०००	१७	१५,००,००,०००
६	४,८५०	१२	२२,७०,०००	१८	२९,६०,००,०००
७	१४,३००	१३	५७,००,०००	१९	५६ करोड़
८	४१,०००	१४	१,३८,००,०००	२०	१ अरब
९	१,१७,०००	१५	३,२०,००,०००		

२. तारा-परिचय

ज्योतिषियोंने सारे खगोलके तारोंको ८८ नक्षत्रोंमें बाँटा है, किन्तु इनमें कितने ही तारे ऐसे हैं, जिन्हें हम उत्तरी गोलार्द्धके वासी देख नहीं सकते। (देखो "विज्ञान" अप्रेल १९४३ में, पृष्ठ १, २, ३६, ३७, डा० गोरखप्रसादका लेख)।

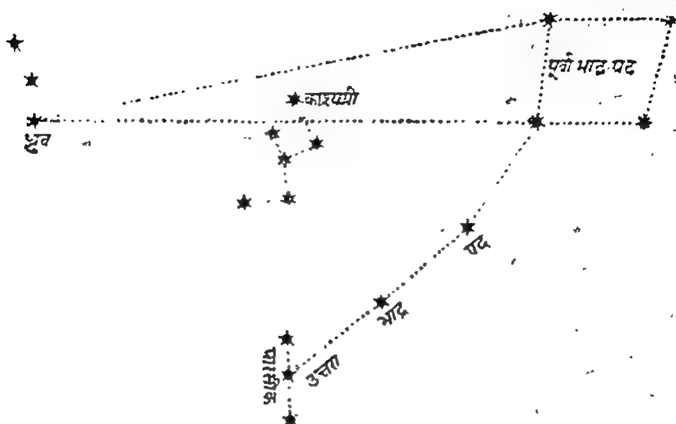
ध्रुव और सप्तर्षिसे हम पहिले शुरू करते हैं। हम लोग जो पृथिवीके उत्तरी गोलार्द्ध अर्थात् भूमध्यरेखासे उत्तरमें रहते हैं, उन्हें उत्तर दिशाका ज्ञान ध्रुवतारा द्वारा आसानीसे हो सकता है। भूमध्यरेखासे देखनेपर जहाँ वह उत्तरी क्षितिजसे सटा देखनेमें आयेगा, वहाँ जितना ही उत्तरकी ओर हम बढ़ते जायेंगे, उतना ही वह क्षितिजसे ऊपर उठता जायेगा। किसी स्थानके अक्षांशको जाननेके लिए ध्रुवतारा अच्छा साधन है। क्षितिजसे जितना डिग्री ध्रुव ऊपर हो, उतना ही उस स्थानका अक्षांश है। यदि हम सीधे उत्तरी ध्रुव-पर पहुँच जायें, तो वहाँ ध्रुवतारा हमारे शिरपर दिखलाई पड़ेगा, और उत्तर दिशा तो हमारे शिरमें ऐसी गायब होगी, कि उसका ढूँढ़ेसे भी पता नहीं लगेगा। नीचे हम ध्रुव, लघु सप्तर्षि, महासप्तर्षि और काश्यपी तारोंका चित्र देते हैं, आकाशसे मिलानेपर ये तारे साफ पहिचानमें आ जावेंगे—



चित्र ७

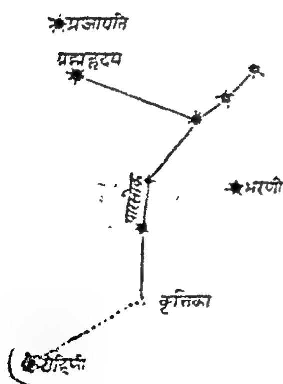
महासप्तर्षिके चौखटेके बाहरवाले दोनों तारों (पुलह, क्रतु)को रेखासे मिलाकर यदि उस रेखाको आगे बढ़ाया जाय, तो वह ध्रुवतारापर पहुँचेगी (चित्र ७)। ध्रुव दूसरे वर्गका तारा है, जिसे कि बाहर निकले सात तारोंके संकेतसे नक्शेमें दिखलाया गया है। ध्रुवके पास सात तारोंका एक और समूह है, जिसे **लघुसप्तर्षि** कहते हैं। हिन्दी भाषाभाषी प्रान्तोंमें रातमें यात्रा करते वक्त इससे हम घड़ीका काम ले सकते हैं। यह बराबर क्षितिजसे ऊपर रहता है, और रातभरमें ध्रुवकी आधी परिक्रमा करता है। काश्यपी तारा पुंज अंग्रेजीके अक्षर W जैसा है। सप्तर्षि जब

ध्रुवके नीचे क्षितिजकी आड़में छिपे रहते हैं, तो यह ऊपर ध्रुवके ऊपर दिखलाई पड़ेगा। ध्रुवसे काश्यपी (शर्मिष्ठा) तारा-गुच्छकी ओर बढ़ी रेखाको



चित्र ८

आगे बढ़ानेपर वह चार बड़े-बड़े तारोंके गुच्छक पूर्वा-भाद्रपदापर पहुँचेगी (चित्र ८), यही वर्षा-ऋतुका प्रसिद्ध नक्षत्र पूर्वा है। उन दिनों सूर्य इसी नक्षत्रके पास उगता है। इसकी सहायतासे हम उत्तरा-भाद्रपदाको आसानीसे पहिचान सकते हैं।

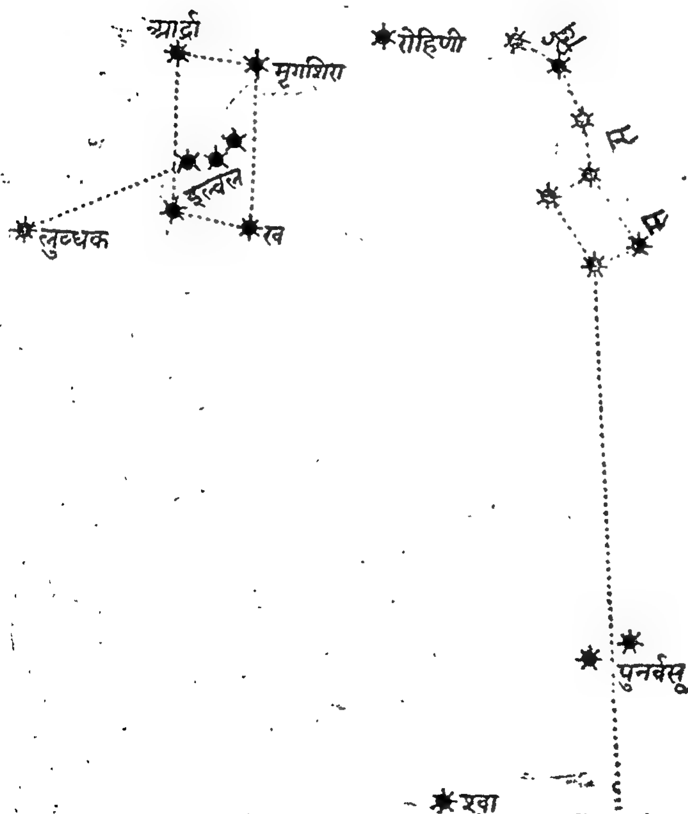


चित्र ९

उत्तरा-भाद्रपदाके दूसरे सिरेपर पारसीक[1] नक्षत्रके तीन तारे हैं। जो हमें भरणी, कृत्तिका, और ब्रह्महृदय तारोंके पहिचाननेमें मदद देंगे, (चित्र ९)। भरणी हिन्दू नक्षत्र-मंडलका दूसरा नक्षत्र है। कृत्तिका छोटे-छोटे तारोंका एक झुमुट है। रोहिणी नामके अनुसार देखनेमें भी लाल मालूम पड़ती है।

[1] Persious (ययाति) [2] Aldebarran.

वर्षाकी एकाध बौछार उसी वक्त शरू होती है, जब कि सूर्यका उदय इस नक्षत्रपर होता है। पहले पकनेवाले आम इसी नक्षत्रमें पकते हैं, जिससे उन्हें 'रोहिनियाँ' कहते हैं।

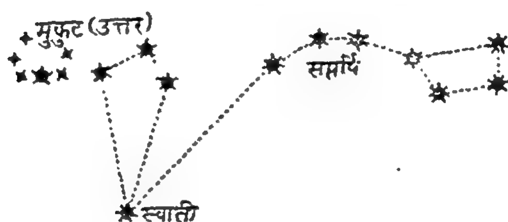


चित्र १०

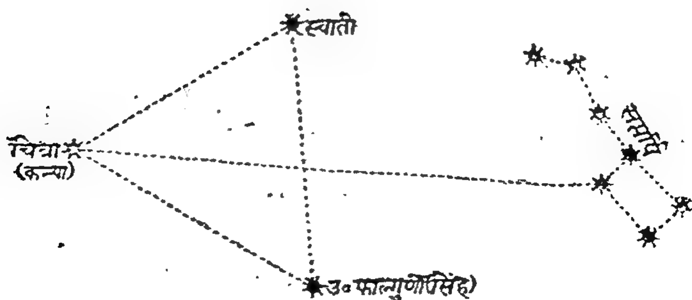
रोहिणीसे मृगशिराके चार तारोंका खटोला आसानीसे पहिचाना जा सकता है (चित्र १०)। इस खटोलेके दो पाये मृगशिरा और आर्द्रा हैं।

खटोलेके ऊपर तीन तारे बच्चोंकी तरह सो रहे हैं, इन्हें इल्वल कहते हैं। इन तीनों तारोंको मिलानेवाली रेखा यदि आगे बढ़ाई जाये, तो वह आकाशके सबसे चमकते तारे लुब्धक (लोधवा)के पास पहुँचती है। सप्तर्षिके चौखटेके दो तारों अत्रि और पुलहको मिलानेवाली रेखा आगे बढ़ाई जानेपर दो चमकते तारे पुनर्वसुके बीचसे गुजरती है। बारह राशियोंमें गिनी जानेवाली मिथुन (जोड़ा) राशि इन्हीं जोड़े तारोंके कारण कही जाती है।

सप्तर्षिकी सहायतासे मघा (सिंह), स्वाती, चित्रा और उत्तरा फाल्गुनीको हम निम्न चित्रों (११-१५) द्वारा पहिचान सकते हैं।—



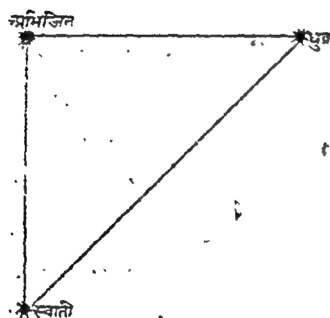
चित्र ११



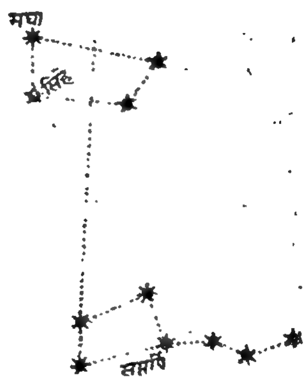
चित्र १२



चित्र १३



चित्र १४



चित्र १५

३. तारोंकी दूरी

सूर्यसे प्लूटोकी दूरीको ही मीलोंमें लिखना तरद्दुदका काम है। और तारे तो इतनी दूर हैं, कि उनकी दूरी लिखनेके लिए नील और शंखकी संख्याएँ भी अपर्याप्त हैं। इस दिक्कतको दूर करनेके लिए ज्योतिषियोंने प्रकाश-किरणोंको अपना गज बनाया है। हमें मालूम है, कि प्रकाश-किरणें १ लाख ८६ हजार मील प्रतिसेकेंडकी चालसे चलती हैं, अर्थात् एक सालमें १,८६,००० × ६० × ६० × २४ × ३६५$\frac{१}{४}$ मील = १,४६,६४,२४,००,००० मील (सूर्यकी दूरीसे ६३ हजार गुना) इसे प्रकाश-वर्ष कहते हैं।

सूर्यके सबसे समीपका तारा चार प्रकाश-वर्ष दूर है और दूसरोंकी दूरी तो करोड़ों प्रकाश-वर्ष तक पहुँचती है। इतनी दूरीको नापना दूरबीन और त्रिकोण मितिके बसकी बात नहीं है।—दूरी इतनी है कि बड़ीसे-बड़ी दूरबीन भी ताराके आकारको बड़ा करके नहीं दिखला सकती इसके लिए मनुष्यके मस्तिष्कने रश्मिवर्ण-दर्शक यंत्र निर्माण किया है। तिकोना शीशा (त्रिपार्श्व) प्रकाशकी किरणोंको उनके लाल, नारंगी, पीले, हरे, श्याम, नीले और कासनी रंगोंमें फाड़ देता है (चित्र १६)। दूरबीन और त्रिपार्श्वके योगसे **रश्मि-वर्ण दर्शक-यंत्र** बनाया गया है। इसके तीन भाग होते हैं—

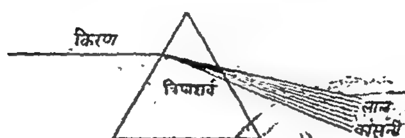
(१) दूरबीन, जो कि दूरके तारोंके प्रकाशको पकड़ती है; फिर वह किरण (२) भीतरसे समान अक्षि[1]के रूपमें निकलकर तिकोने शीशों (त्रिपार्श्वों)[2]की झंझरीपर पड़ती है। इस झंझरीमें एक दर्पणका टुकड़ा लगा रहता है, जिसपर बहुत सी सूक्ष्म समानान्तर रेखाएँ खिंची रहती हैं। झंझरी किरणोंको अलग-अलग रंगोंमें फाड़ती है, और उनके प्रत्येक अवयवके कम्पनको अलग-अलग समानान्तर किरणोंके रूपमें प्रतिफलित करती है। इस प्रकार काँचपर प्रतिफलित किरणें भिन्न-भिन्न तरंग-लम्बानोंके समानान्तर पुंजसी जान पड़ती हैं। पुंजोंकी दिशा भिन्न-भिन्न होती है। दूरबीन इनमेंसे प्रत्येक रेखापुंजको प्रतिबिंबके तौरपर 'फोकस'[3] करती है, जिसे कि आंखके शीशेसे उसी वक्त देखा जा सकता है, या फोटो लेकर उसका इतमीनानसे पीछे परीक्षण किया जा सकता है। इन अन्तिम भिन्न-भिन्न रंगोंके प्रतिबिंबोंपर कितनी ही सूक्ष्म काली रेखाएँ होती हैं, जिनकी संख्या और तिरछापन किरण-उद्गम-स्थानके तत्त्वों और उनकी वाष्पीय आदि अवस्थाको बतलाते हैं। (चित्र १७)

ग्रहों और सूर्यकी दूरी नापनेमें हम पृथिवीके व्यासको आधार मानकर उसकी दोनों छोरोंपर किसी आकाशीय पिंडसे खींची जानेवाली रेखाओंसे

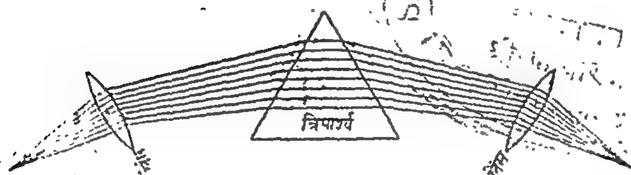
---

[1] Axis. [2] Prism. [3] Focus.

बने कोणोंको नाप लेते हैं। लेकिन तारोंकी दूरी इतनी अधिक है, कि पृथिवी-का व्यास कोई हैसियत नहीं रखता। इसके लिए पृथिवीकी कक्षाका व्यास लिया जाता है, लेकिन तो भी तारापर बननेवाला कोण बहुत छोटा होता



चित्र १६



चित्र १७

है। अभी तक जितने तारे नापे गए हैं, किसीका कोण १″ विकला (सेकेंड)[1] भी नहीं मिला है। १८३८ ई०में पहिले-पहिल एक ताराका कोण (लम्बन) मालूम हुआ, उससे पहिले तारोंकी दूरीका नापना असम्भव समझा जाता था। आजकल कोणको शुद्धतापूर्वक नापनेमें बहुत भारी सहायक फोटो-ग्राफी है। जिस ताराका कोण जानना है, छ महीनेके अन्तरसे (जिसमें कि पृथिवी अपनी कक्षाका आधा भाग तै कर लेती है, और इस प्रकार कक्षाका व्यास आधार-रेखा बन जाता है) दो फोटो आसपासके दूसरे तारोंके साथ ले लिए जाते हैं। इससे हम तारापर बननेवाले कोणको जान सकते हैं (चित्र १८)। इस कोणमें ताराकी अपनी गति भी शामिल है, जिसे—

[1] एक समकोण=९०° अंश (डिग्री); १° अंश=६०′ कला (मिनट); १′ कला=६०″ विकला (सेकेंड)।

साल भर बाद पृथिवीके अपनी कक्षाके पहिले स्थानपर आ जानेसे—आसानीसे जानकर निकाल दिया जा सकता है। इस प्रक्रियासे नापनेपर एक विकलाके सौवें हिस्सेसे अधिक गलती होनेकी संभावना नहीं है। अबतक जिन तारोंकी नपाई हुई है, उनमेंसे कुछकी कोणमात्रा (लम्बन), दूरी आदि इस प्रकार हैं—

	कोण (विकला)	दूरी (प्रकाश-वर्ष)
लुब्धक ..	०·३८	८·६
श्रवण ..	०·२२	१४·८
रोहिणी (वृष) ..	०·१५	२१·७
अभिजित् ..	०·१२	२७·२
ब्रह्महृदय ..	०·१२	२७·२
ध्रुव तारा ..	०·०७	४६·५
नराश्व[1] ..	०·७६	४·३
समीपी[2] ..	०·७९	४·१
हंस ६१ ..	०·३०	१०·९

हमारा स्थानीय विश्व (आकाश-गंगा) ३ लाख प्रकाश-वर्ष लम्बा और ६० हजार प्रकाश-वर्ष मोटा है। इस तरह सूचीके सारे ही तारे हमारे स्थानीय विश्वसे संबंध रखते हैं। हमारे सबसे नजदीकके तारोंका प्रकाश चार वर्षसे अधिकमें हमतक पहुँचता है। जिस ध्रुवको आज हम देखते हैं, वह ४६½ वर्ष पहिलेके ध्रुवका प्रेत है। ऐसे भी तारे हैं, जिनका प्रकाश हमारी तरफ उस वक्त चला, जब कि पृथिवीपर अभी मनुष्य पैदा भी नहीं हुआ था।

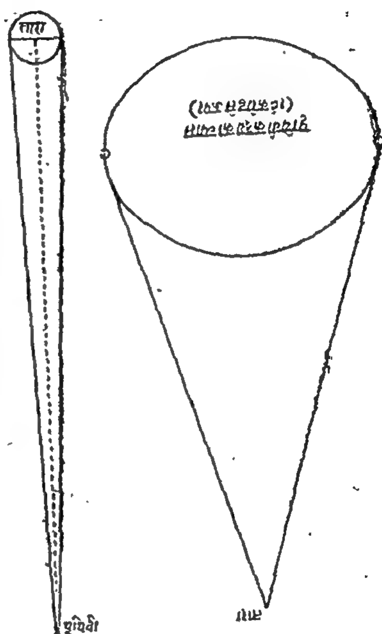
---

[1] चित्रा (कन्या), विशाखा (तुला) दोनों नक्षत्रों तथा आकाशगंगाके बीच एक नक्षत्रमंडल (Centaurus), जिसके उक्त दोनों तारे आकाश-गंगामें पड़ते हैं।

[2] Proximo.

४. आकार और तापमान

तारोंके आकारका नापना और भी कठिन काम है, और १८६८ ई०से पहिले तो इसके प्रस्ताव करनेका भी किसीको साहस नहीं हुआ था। ताराकी दूरी नापनेके लिए पृथिवी-की कक्षाका व्यास हमारे पास मौजूद है, किन्तु दूरीके कारण तारा-पिंड इतना छोटा है, कि उसे पृथिवी-से नापा नहीं जा सकता। विलसन-गिरिकी १०० इंची दूरवीन काममें सहायक हुई है। सूक्ष्ममापक-यंत्रोंसे हम ताराके वेधको नाप सकते हैं (चित्र १८)। इस नापसे आर्द्राका व्यास कोणोंमें ०″.०४६; स्वाती-का ०″.०२४ और ज्येष्ठका ०″.०४० मालूम हुआ है। एक कोण और लंब मालूम हो जानेपर तारा-का व्यास निकालना आसान काम है। इस नापसे कुछ तारोंके पिंड सूर्य (व्यास ८,६४,३६७ मील)की तुलनामें निम्न प्रकार नापे गए हैं—



चित्र १८

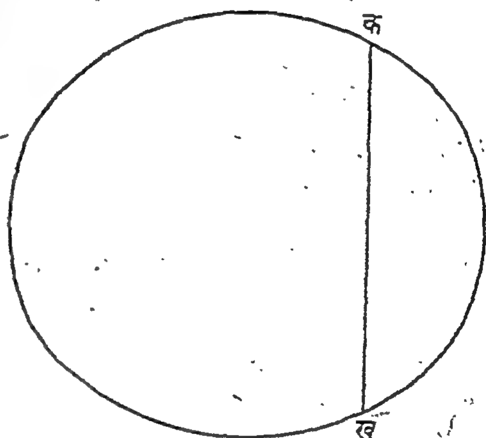
सूर्य	१	ज्येष्ठा	४८०
प्रजापति	१२	अभिजित्	२·४
स्वाती	३०	लुब्धक	१·८
रोहिणी	६०	श्वानिका क	१·६
आर्द्रा	२६०	नराश्व क	१

कुछ अप्रसिद्धसे तारे सूर्यसे छोटे भी मिले हैं। सूर्य वस्तुतः तारोंके बीच एक मझोले दर्जेका तारा है। आर्द्राका व्यास २६ करोड़ मील है, यदि वह

समान दूरीपर नहीं है, दूसरे हम खुद आकाशगंगाके केन्द्रपर नहीं, बल्कि उससे ४७,००० प्रकाश-वर्ष हटकर हैं। यदि बीचमें होते तो किनारों पर तारे एक समान घने मालूम होते।

आकाशगंगा[1] एक मझोले कदकी निहारिका है, जिसकी मात्रा एक अरब सूर्योंसे (सूर्य पृथिवीसे तीन लाख तेरह हजार गुना) भी ज्यादा है। वह अपनी छोटी धुरी (क, ख) पर घूम रही है (चित्र १६), और उसका एक पूरा चक्कर तीस करोड़ वर्षों में समाप्त होता है।

काप्टेन विश्व हमारी आकाशगंगाका एक छोटासा भाग है, जो कि हरकिल तारामंडलकी नीहारिका (म. ३३) में पड़ता है।



चित्र १६

काप्टेन विश्व जैसे हजारों तारा-गुच्छक हमारी आकाशगंगा और चक्करदार नीहारिकाओंमें पाये जाते हैं।

§ ७. चक्करदार नीहारिकाएं या द्वीप-विश्व

हम नंगी आंखोंसे एकाध ही नीहारिकाएं देख सकते है, और वह भी देखनेमें तारों जैसी मालूम होती हैं। दूरबीनसे देखनेपर उनमें कुछ गोल दिखलाई पड़ती है और कुछकी आकृति शंखके चक्करकी भांति (फोटो-चित्र ६)। गोल नीहारिकाएं (फोटो-चि० ८) हमारे स्थानीय विश्व या

---

[1] Milkyway.

आकाशगंगाके तारागुच्छ हैं। चक्करदार नीहारिकाएँ महान् विश्वसे छोटी किन्तु करोड़ों तारागुच्छकोंसे मिलकर बने छोटे विश्व हैं। आकाशगंगा भी इसी श्रेणीका एक द्वीप-विश्व है। हमारी पृथिवी न वृहस्पतिकी भाँति विशाल न एरोस् या शुक्रकी भाँति छोटा ग्रह है। सूर्य भी मझोले डीलडौलका ह, किन्तु हमारी आकाशगंगा अपनी श्रेणीके द्वीप-विश्वोंसे बहुत बड़ी है। उपग्रहों-ग्रहों और सूर्यके बीच खाली जगह रखनेमें जो उदारता प्रकृतिने दिखलाई है, वह इन नीहारिकाओंके फासिलेमें और बढ़ गई है—दो नीहारिकाओंके बीच १० लाख प्रकाश-वर्ष लंबी खाली जगह पड़ी है।

अबतक चक्करदार नीहारिकाओंकी जो खोज हुई है उसमें सबसे दूरकी (चं) नीहारिका मिथुन राशि या पुनर्वसु नक्षत्रमें पाई गई है। यह बहुत ही क्षीण है, दूरी नापनेपर १५ करोड़ प्रकाश-वर्ष दूर साबित हुई है। आजकी सबसे शक्तिशाली १०० इंची दूरबीन हमारी पहुँच यहीं तक करा सकी है। प्लोमरगिरिके लिए बन रही २०० इंची दूरबीन हमारे इस क्षेत्रको ज़रूर आगे बढ़ायेगी, किन्तु अभी हमें इतने ही पर सन्तोष करना है।

जिन ९० चक्करदार नीहारिकाओंका वेध लिया जा चुका है, उनमें ५ को छोड़ बाकी सभी हमसे दूरकी ओर बहुत तेजीसे हटती जा रही हैं। इनकी यह गति ३०० किलोमीतर (१८६ मील)से १८०० किलोमीतर (१११६ मील) प्रति सेकेंड अर्थात् सूर्यकी गतिसे भी कई गुना अधिक है। एडिंग्टनके अनुसार विश्व फूंक मारे जाते रबरके कुप्पेकी तरह फैलता जा रहा है, और इस फुलावके कारण हर तेरह करोड़ वर्ष बाद आकाशगंगा-का फासला दूना हो जाता है। यही सिद्धान्त नीहारिकाओंकी इतनी तीव्र गतिका कारण मालूम होता है।

यद्यपि विवरणके साथ जाँच-पड़ताल की गई नीहारिकाएँ सौसे भी कम हैं, किन्तु दूरबीनने हमें बीस लाखके करीब चक्करदार नीहारिकाओंके अस्तित्वका पता दिया है।

§ ८. विश्व

१. विस्तार

पृथिवी, सूर्य, तारा और चक्करदार नीहारिकाओंके इस संक्षिप्त वर्णनसे मालूम होगा कि विश्व जिन पिंडोंका समूह है, वे कितने विशाल और कितने गर्म हैं। सूर्य और उससे ४८० गुना बड़ी ज्येष्ठा जैसे तारों, हमारी आकाश-गंगा जैसे विकराल द्वीप-विश्वोंके होते हुए भी इनके बीच अचिन्त्य विस्तृत खाली जगह पड़ी हुई है। इस खाली जगहमें ये पिंड जंगलमें सूईसे बढ़कर स्थान नहीं रखते। सबसे नजदीकके पड़ोसी चन्द्रमा और हमारे बीच ३,३८,८४० मीलका खाली आकाश है। ग्रहोंमें जो ग्रह कभी-कभी हमारे पास सबसे नजदीक पहुँच जाता है, वह है शिशुग्रह एरोस्, किन्तु वह भी डेढ़ करोड़ मील दूरसे ही झाँकता है। सूर्य हमारा प्राणदाता भी हम ९ करोड़ मीलसे अधिक दूर पर रहता है। और सबसे नजदीकके तारेकी दूरीको भी मीलोंमें लिखना एक कवाहत मोल लेनी है; वह इतना दूर है, कि वहाँसे चले प्रकाशकिरण जैसे दूतको भी हम तक पहुँचनेमें ४ वर्षसे अधिक लगते हैं। तारे एक दूसरेसे इससे कम फासला रखते हैं, इसका कोई प्रमाण नहीं। द्वीप-विश्वोंके बीच भी खाली जगह ही ज्यादा है। और एक द्वीप-विश्वसे दूसरे द्वीपमें प्रकाश-किरणोंको जानेके लिए दस लाख वर्ष लगाने पड़ते हैं।

आकाशगंगा जैसे बीस लाख द्वीप-विश्व जिसके भीतर हों, जिसके क्षेत्रफलको ३,८४,००,००,००,००० करोड़-लाख-करोड़-लाख-करोड़-लाख-करोड़-लाख घन मील हम लिख तो सकते हैं, किन्तु उसका चित्र खींचना मनके पर्देपर भी कठिन है। विश्वके सबसे सूक्ष्म कणों (एलेक्ट्रनों)की गणना $१०^{७८}$ (अर्थात् दसके दाहिने ७८ बिन्दु) कहनेमें ही बहुत सरल मालूम होती है।

हाँ, इतनेसे यह तो मालूम हो गया, कि विश्व अनन्त तक फैला नहीं है। विश्वकी आकृति नास्पाती या ढोलकी शकलकी है। हमारी

खोज अभी १५ करोड़ प्रकाश-वर्ष तक हो सकी है, इसलिए इसके बारेमें इससे ज्यादा नहीं कहा जा सकता। सान्त परमाणुओं, सान्त तारों और सान्त द्वीप-विश्वोंसे बना विश्व भी सान्त ही हो सकता है, यह बात स्पष्ट है। सान्त होते भी विश्वकी सीमा विश्व खुद है। जिस तरह सान्त होते भी भूगोल अपने आप अपनी सीमा है। पिंडरहित (खाली) और पिंड-सहित (बसे) स्थान विश्वके भीतर हैं। जहाँ विश्व नहीं वहाँ उससे परेका सवाल उठाना झूठा तर्क है।

२. फैलता विश्व

वैज्ञानिक अन्वेषणोंसे पता लगता है, कि विश्व जो इस वक्त है, वही हमेशासे नहीं चला आया। एडिंग्टनके अनुसार विश्व ऐसे रबरके गुब्बारेकी तरह है, जिसे हवा भरकर फुलाया जा रहा है; अथवा, मानों वह साबुनका बुलबुला है, जिसे बिजलीसे फुलाया जा रहा है। बुलबुलेकी पतली खोल लगातार बढ़ती जा रही है। जितना ही बुलबुला अधिक बढ़ता जा रहा है, उतनी ही उसकी सिकुड़नेकी ताकत कम होती जा रही है। जैसे इस बुलबुलेमें 'ठोस वस्तु' किनारेपर होती है, उसी तरह विश्वके अवयव (पिंड) भी खोलके पास बाहरकी ओर हैं। जैसे फूलते-फैलते गुब्बारेकी खोलका हर एक सूक्ष्म भाग फैलावके साथ एक दूसरेसे दूर होता जाता है, वैसे ही विश्वका हर एक पदार्थ इस मौलिक फैलावके कारण एक दूसरेसे दूर होता जा रहा है। लाखों प्रकाश-वर्षकी दूरीपर अवस्थित चक्करदार नीहारिकाएँ जो हजार-हजार किलोमीतर प्रति सेकेंडकी चालसे भागती दीख रही हैं, उसकी बहुत कुछ वजह विश्वका यह फैलाव है। हर तेरह करोड़ वर्ष (यही हमारी सबसे पुरानी चट्टानोंका समय है) बाद विश्वका व्यास दुगुना हो जाता है। पहिले किसी वक्त वह एक अरब प्रकाश-वर्ष था, किन्तु अब दसगुना हो गया है। विश्वका घेरा (परिधि) भी पहिले ६ अरब सत्तर करोड़ प्रकाश-वर्ष था। यह फैलाव हर एक अवयवमें है। एलेक्ट्रन—नाभिकण, अणु-परमाणु, ग्रह-तारे सबके बीचका अवकाश इसी दरसे बढ़ता गया है।

विश्व संबंधी ये आँकड़े ध्यानमें रखने लायक हैं—

(क) दूरवर्त्ती पदार्थ प्रत्येक ३·२६ प्रकाश-वर्ष दूरीपर प्रति सेकेंड ५२८ किलोमीतर (३२८ मील)की चालसे हट रहा है।

(ख) आरम्भमें विश्वका व्यास ३२८ **मेगापरसेक**[1] या १०,०६८० लाख प्रकाश-वर्ष था।

(ग) विश्वकी कुल मात्रा १० अरब-अरब-लाख सूर्य है।

(घ) आरम्भमें प्रति घन-सेन्तीमीतर (१ सेन्ती=$\frac{2}{5}$ इंच)में एक हाइड्रोजन परमाणुभर भौतिक तत्त्व थे।

वर्त्तमान परिमाणके जाननेमें बड़ी दिक्कत यह है, कि सबसे शीघ्रगामी संदेशवाहक किरणें भी हमारे पास लाखों-करोड़ों वर्षोंमें पहुँचती क्या बहुत सी तो अभी रास्तेमें हैं। कितनी ही सृष्टि-किरणोंने उस वक्त अपना 'स्थान' छोड़ा, जब कि विश्वका आकार छोटा था। उसके बाद जिस मात्रामें आकार बढ़ता गया, किरणें उसी परिमाणमें अपनी चालको तेज नहीं कर सकीं, और अभी वह विश्वकी एक परिक्रमा भी नहीं लगा सकीं।

फिर संदेशवाहक यदि हमारे पास पहुँच भी जाते हैं, तो उस वक्त संदेश भेजनेवाले नदारद। जिन तारोंको हम आकाशमें देखते हैं, वेध-शालाओंमें जिनका वेध लेते हैं, उनमें जीवितसे प्रेतोंकी संख्या लाखों करोड़ों गुना ज्यादा है। आज हम उस ध्रुवताराको देख रहे हैं, जो आजसे ४६$\frac{1}{2}$ वर्ष पहिले मर चुका है। आज हम उस नीहारिकाकी किरण पा रहे हैं, जो आजसे डेढ़करोड़ वर्ष पहिले थी, और इस बीचके समयमें पहिली जगहसे खरबों-नीलों-पदमों मील दूर हट गई है, तथा रूप और आकारमें जमीन-आसमानका पलटा खा चुकी है।

आखिर इस निरन्तर फैलावका इस महान् बुलबुलेपर प्रभाव क्या पड़ेगा? एडिंगूटनका कहना—वह फूट जायेगा। उसके द्वीप-विश्व जो अभी एक सूत्रमें पिरोये हैं, स्वतंत्र विश्व हो जावगे।

---

[1] Megapersec.　　[2] Cosmicrays.

दूरतम चक्करदार नीहारिकाओंके १००० किलोमीतर (६२० मील) प्रतिसेकेंड भागनेका समाधान इसी कल्पनासे किया जा रहा है; अभी कहा नहीं जा सकता, कि इसका कोई दूसरा समाधान भी हो सकता है या नहीं।

३. विश्व और जीवन

मनुष्य या प्राणि-जगत्का विश्व-योजनामें कोई स्थान नहीं मालूम होता। हमारे सौर-परिवारमें पृथिवीपर ही उनका पता है। मंगल, संदिग्ध स्थान है। चाँद और दूसरे ग्रहोंके तापमान ही कह रहे हैं, कि वहाँ जीवनकी गुंजाइश नहीं। आकाशीय पिंडोंके बीचकी खाली जगहोंमें परम-शून्य तापमानके साथ शीत और मृत्युका अखंड राज्य है। तारों जैसे तपते गोलोंमें जीवनकी संभावना कहाँ? शायद उनके ग्रह हों, शायद उन दर्जनों ग्रहोंमें एकाध ऐसे भी हों जिनमें किसी प्रकारका जीवन हो। किन्तु इस सबसे एक बात तो स्पष्ट है—विश्वका उद्देश्य जीवन नहीं है। जीवन उसके राह चलतेकी उपज है।

§ ९ सापेक्षतावाद

१. जगत् क्षण-क्षण परिवर्तनशील

सारा (विश्व) अनित्य (क्षण-क्षण परिवर्तनशील) है, यह बुद्धके[1] सारे दर्शनका सार है। "जो है वह क्षणिक है"[2] जो क्षणिक नहीं वह है ही नहीं, यह बौद्ध-दर्शनका साधारण नारा रहा है। वैसे अरस्तूने भी "जहाँ भूत (=भौतिक तत्त्व) है, वहाँ गति और परिवर्तन है"—कहा, किन्तु अरस्तूके लिए एक नित्य अपरिवर्तनशील आध्यात्मिक (विज्ञानमय) जगत् भी मौजूद था। यहाँ हम परिवर्तनशीलतावादके दार्शनिक पहलूपर विचार नहीं कर रहे हैं। विश्वमें क्षणिकता और निरन्तर गतिके सिद्धान्तको मानते ही हमें किसी-न-किसी रूपमें सापेक्षतावादपर पहुँचना होगा, जैसा

[1] सब्बं अनिच्चं (सर्वमनित्यम्)। [2] यत् सत् तत् क्षणिकम्।

कि बौद्ध दर्शन अन्तमें नागार्जुनके सापेक्षतावादपर पहुँचा, यद्यपि वह रचनात्मककी जगह ध्वंसात्मक, वास्तविककी जगह काल्पनिक ज्यादा था। आइन्स्टाइन्का सापेक्षतावाद भी विश्वकी क्षणिकता, निरन्तर गतिका ही परिणाम है।

दीपशिखामें, तिनकेकी आगमें, क्षणिक परिवर्तन हमें साफ दिखाई देता है। बहती धारा और उड़ते बादलोंकी गति हमारे लिए स्पष्ट है। किन्तु कितनी ही वस्तुएँ हमें देखनेमें स्थिर, गतिशून्य मालूम होती हैं। वृक्षका यह हरा पत्ता स्थिर मालूम हो रहा है, किन्तु यदि इसे एक शक्तिशाली अनुवीक्षणसे देखें तो, वह दौड़ते कणोंका झुंड मालूम होगा। स्थिर पानी देखनेमें निश्चल मालूम होता है, किन्तु जिन अणुओंके मिलनेसे वह बना है, उन्हें हम अणुवीक्षणसे देखें तो मालूम होगा कि वे बड़ी तेजीसे चल रहे हैं। छोटे-छोटे कण किसी तरल पदार्थमें लटकाए जाते हैं, और काफी देर तक जरा भी कहींसे धक्का या गति न देनेपर वह स्थिरसे दीख पड़ते हैं। तरल वस्तुको जिस वक्त इस तरह हम बिलकुल निश्चल देख रहे हैं, उस वक्त भी यदि अणुवीक्षणसे जाँच करें, तो वे छोटे कण घूम-घुमौवे तरीकेपर झटकेके साथ चलते दीख पड़ेंगे। नापनेपर जान पड़ता है कि पानीके अणु उन्हें धक्का दे रहे हैं, जिससे वे निश्चित गतिसे अनिश्चित दिशाकी ओर चलते मालूम होते हैं। कणोंकी इस गतिको **ब्राउनीय गति** कहते हैं। इस प्रकार जब कि तरल पदार्थ निश्चल-सा मालूम होता है, उस वक्त भी उसके बनानेवाले कण हिल रहे होते हैं। तरल पदार्थके जिस रूपको हमारी आँखें देख सकती हैं, वह हमें निश्चल-सा मालूम होता है। लेकिन तीव्र गतिसे चलता बिजलीका पंखा भी निश्चल मालूम होता है, और ऐसे चलते हुए अत्यन्त छोटे-छोटे पंखोंके गोल चक्करोंको मिलाकर यदि हम कोई शकल तैयार करें, तो वह भी हमें निश्चल ही मालूम होगी, किन्तु यह निश्चलता वास्तविक निश्चलता नहीं है।

इस प्रकार विश्वमें दिखलाई देनेवाली निश्चलता वस्तुतः दिखनेकी ही निश्चलता है। विश्वके सूक्ष्मतम अंश—विश्वकी मूल ईंटें—तो गतिमें

सबको मात करती हैं। स्थिरताका भारी भ्रम हमारे भाषा-दोषसे भी होता है। ठीक तरहसे कहनेपर हम "है" कह ही नहीं सकते। "है" स्थिरताको प्रकट करता है, जिसका कि प्रकृतिके राज्यमें कहीं पता भी नहीं। "है" की जगह "होता है" (=भवति) कहना अधिक दुरुस्त होगा, क्योंकि जगत् वस्तुओंको (जिनसे स्थिरता प्रकट होती है)का नहीं, घटनाओंका समूह है, वह सिनेमाकी सर्राटेसे भागती तस्वीरोंसे बना दृश्य है।

हमारे विचार बदलते रहते हैं, रुचि-अरुचि कालान्तरमें कुछ-से-कुछ हो जाती है। आचार-विचार, धारणाओं और रूढ़ियोंकी कीमत हमारी नजरमें भी घटती-बढ़ती रहती है। परिस्थितियाँ हमको बदल रही हैं, हम परिस्थितियोंको बदल रहे हैं। समाज व्यक्तिको बदल रहा है, व्यक्ति समाजको बदल रहे हैं। मनुष्यके शरीरका सबसे सूक्ष्म यंत्र—उसके मस्तिष्ककी पीली मज्जा—का तेजीसे बिजलीकी चालसे लहराना और बदलना ही हमें ज्ञान और विज्ञानके बड़े-बड़े चमत्कारोंके रूपमें दिखाई पड़ता है।

बादलोंको तरह-तरहका रूप लेते देख दर्शकके मनमें बड़ा कौतूहल होता है। विश्व रूप बदलनेमें अपने बादलोंसे पीछे नहीं है। उसका हर एक अवयव जो एक क्षण पहिले था वही दूसरे क्षण नहीं रहता। कोयलेका टुकड़ा एक क्षण पहिले कोई काली-काली ठोस चीज थी, अब वह जलकर कोयला नहीं रहा। उसका कुछ भाग चमकते कणोंमें बदल गया, जो कि अब आकाशमें चल रहे हैं, कुछ भाग काले कणोंका रूप ले धुएँकी शकलमें फैल रहा है।

विश्वमें तेजीसे परिवर्तन हो रहे हैं, और हर परिवर्तन एक नई चीज हमारे सामने उपस्थित कर रहा है। आमूल परिवर्तन हो रहा है, किन्तु कुछ शर्तोंके साथ। जो चीज नई उपस्थित होती है, वह पहिलेके गुणोंमें ही नहीं, रूपमें भी सादृश्य लिए होती है। इसी सदृश-उत्पत्तिके कारण हमें स्थिरताका भ्रम होता है, जैसे काटे जानेके बाद नये उगे केशोंमें।

दिलचस्प कहानीसे समानता रखता है; सात सीधे-सादे लोग घरसे निकल कर कहीं जा रहे थे। रास्तेमें फूली हुई अलसीका खेत आया। उन्होंने समझा—शुद्ध नील जलका सरोवर है, नहा लेना चाहिए। कपड़े खोल उन्होंने मल-मलकर नहाना शुरू किया। नहाकर बाहर निकले, कपड़ा पहिन गिनने लगे, तो छै ही आदमी मौजूद थे, एक गायब था। दूसरे, तीसरे....सभीने गिना किन्तु वही छै, एक गायब। बैठकर रोने लगे—"हाय! हमारा एक साथी इस सरोवरमें ही कहीं डूब गया।" वह गिननेमें अपनेको छोड़ जाते थे। हम भी विश्वके परिवर्तनको जब कभी अनुभव करते हैं, तब अकसर भूल जाते हैं, कि हम खुद उस परिवर्तनके भारी शिकार हैं।

देश (=लंबाई, चौड़ाई, मुटाई) और काल इसी परिवर्तनके रूपको प्रदर्शित करते हैं, यह हम आगे बतलानेवाले हैं। यहाँ इतना समझ लेना चाहिए कि जब हम किसी उत्पन्न वस्तुके कारणोंको गिनाते हैं, तो उनमें कालको नहीं गिनाते, और न देशको ही। भौतिक कारणोंके समुदायसे अलग देश-कालकी सत्ता नहीं है। देश कारणोंकी एक दूसरेकी उस सापेक्ष स्थितिको बतलाता है, जो उन्हें साथ-साथ देखते वक्त मालूम होती है। काल उनकी स्थितिको, साथ-साथ नहीं, आगे-पीछे प्रकट करता है। वस्तुतः कहना चाहिए कि साथ-साथकी सापेक्ष स्थितिको हम वस्तुसे अलग करके उसी तरह काल कहकर पुकारते हैं, जिस तरह एक दो.... को वस्तुसे अलग करके। और इसी तरह एक साथ नहीं आगे-पीछेकी सापेक्ष स्थितिको अलग करके उसे हम काल कहकर पुकारते हैं।

२. सापेक्षता

२६ वर्षके एक तरुणने १९०५ ई०में जर्मन-भाषाके एक साइंसीय वार्षिक-पत्र "भौतिकशास्त्रका वर्षपत्र"में एक निबंध लिखा। संसारके दार्शनिक और वैज्ञानिक इतिहासमें उस निबंधने जबर्दस्त उथल-पुथल मचा दी। उन्नीसवीं शताब्दीकी सबसे बड़ी गवेषणा समझे जानेवाले "ईथर"

तत्त्वको उसने नाममात्र ही शेष रहने दिया। दो शताब्दियोंसे साइंस-क्षेत्रमें धाक जमाकर बैठे हुए न्यूटनके गुरुत्वाकर्षणसे उसका सिंहासन छीन लिया। उस तरुणका नाम है अल्बर्ट आइन्स्टाइन् (जन्म १८७९ ई०), और उसके इस निबंधका नाम था—"सीमित सापेक्षता"। १९१६ ई०के बाद आइन्स्टाइन्ने अपने सिद्धान्तको और भी विस्तृत क्षेत्रमें प्रयुक्त किया, जिसका नाम है—"असीम (या साधारण) सापेक्षता"। अपनी इस गवेषणाके लिए आइन्स्टाइन्को सन् १९२१ में भौतिक साइंसका नोबेल पुरस्कार मिला। निबंध भौतिक और गणित शास्त्रोंकी पेचीदगियोंसे भरा है, इसलिए उसका यहाँ देना मेरे लिए दुस्साध्य और अधिकांश पाठकोंके लिए निष्प्रयोजन है। किन्तु विशेषज्ञोंके कामका होनेपर भी आइन्स्टाइन्का सापेक्षतावाद ऐसा नहीं है, कि साधारण शिक्षित जन उसे बिलकुल समझ ही न सकें, और साइंसीय दृष्टिकोण बनानेके लिए तो उन्हें इसकी आवश्यकता और भी अनिवार्य है।

सापेक्षतावादने उन्नीसवीं शताब्दीके साइंसवेत्ताओंमें प्रचलित कई सिद्धान्तोंको भ्रान्त सिद्ध कर दिया है। ईथर, गुरुत्वाकर्षण, देश और कालकी धारणाएँ इनमें मुख्य हैं। आगे इनकी चर्चा करनेके पूर्व कुछ साधारण बातोंकी जानकारी जरूरी होगी।

(क) **रेखागणितके स्वयंसिद्ध**—रेखागणितके बहुतसे स्वयंसिद्धोंको हम खातिरके लिए ही स्वयंसिद्ध मान लेते हैं। रेखा वह है, जिसमें लंबाई पर चौड़ाई या मुटाई नहीं। विंदुमें लंबाई भी नहीं होती। दुनियामें ऐसी रेखा नहीं देखी गई, जिसमें चौड़ाई या मुटाई न हो। वह उपेक्षणीय या नगण्य दिख सकती है पर वे हैं ही नहीं, यह नहीं कह सकते। धरातलकी भी यही बात है। भले ही हमारा दिमाग सिर्फ लंबाई चौड़ाईको ही ध्यानमें लावे, किन्तु सिर्फ उन्हीं दो परिमाणोंवाली किसी चीजको तो प्रकृतिने नहीं बनाया है। सरल रेखा कागजपर खिंची देखकर हम समझ लेते हैं कि इसकी सरलता बिलकुल स्वाभाविक बात है। सरल-से-सरल रेखाको भी यदि अधिक बारीक पैमानोंसे जाँचा जाये, तो वह पूरी सरल नहीं रह सकती

और यदि उस सरल-रेखाको हाथ दो हाथसे फर्लांग और सौ दो सौ मील तक बढ़ाया जाए, तो चाहे चींटीके देखनेमें फुटवालकी लकीर सरलरेखा भले ही हो, किन्तु पृथिवी जैसी गोल चीजपर खींची रेखा सरल नहीं हो सकती। हमारी खींची सभी रेखाएँ पृथिवीपर खिंची बड़ी रेखाओंके अंशमात्र हैं। दो विन्दुओंके बीच एक ही 'सरल रेखा' खींची जा सकती है यह कैसे ? सरल रेखाओंसे बने धरातलकी समतलता भी श्रद्धामात्र है, छोटा तालाब समतल मालूम होता है; तीन तरफ स्थलसे घिरी खाड़ीका जल भी समतल मालूम हो सकता है; किन्तु उसकी चौथी तरफ देखने या खुले समुद्रपर नजर डालनेसे मालूम होगा कि वह समतल नहीं, गोलतल है। जब सरल रेखाएँ भी वृत्तके छोटे अंश हैं, तो "दो **समानान्तर रेखाएँ** आपसमें कहीं नहीं मिलतीं", यह भी कल्पनामात्र है। त्रिभुजके तीनों कोण दो समकोणके बराबर होते हैं, यह बात भी ठीक नहीं है। त्रिभुज यदि धनुषकार चापोंसे बना है और सभी रेखाएँ पृथिवी-मेखलाकी अंश हैं, तो वे दो समकोणसे कम और अधिक भी हो सकते हैं।

(ख) नाप—नापका भी यही हाल है। जिस लंबाई, चौड़ाई, मुटाईके द्वारा हम विन्दु, रेखा, धरातल आदि की व्याख्या करते हैं, उन्हें हम उनकी वास्तविक सापेक्ष स्थितिमें न लेकर एक आदर्श-मानके रूपमें लेते हैं। लंबाई नापनेके लिए कोई स्थिर आदर्श मानदंड नहीं मिल सकता। ठोस-से-ठोस धातु-का ठीकसे नापा हुआ मानदंड—लोहे या पीतलका तार या छड़—भी एक दिशासे दूसरी दिशामें घुमाने मात्रसे अपनी लंबाईका करोड़ हिस्सा घट या बढ़ जाता है। एक ही जमीनकी भिन्न-भिन्न समयमें, या भिन्न-भिन्न आदमियों द्वाराकी गई जितनी नापियाँ होती हैं, वे सूक्ष्मतामें जानेपर एकसी नहीं उतरतीं। शीशे या प्लाटिनम्की खूब सावधानीसे निशान लगाई हुई जरीबसे नापा जाये, तो भी नापियोंमें कुछ-न-कुछ अन्तर रहता है। फिर दिशा बदलनेसे लंबाईका फर्क होता है, यह अभी कह चुके हैं। साथ ही तापमानके परि-वर्तनसे धातुओंका फैलना-सिकुड़ना लाजमी है। और समयान्तरमें भीतरी परमाणुओंकी स्थितिमें जो लगातार अन्तर पड़ रहा है, वह भी मानमें अन्तर

डालता है। खुद नापी जानेवाली जमीनके वारेमें तो यह बात और भी सच है, क्योंकि वह प्लाटिनमकी-सी दृढ़ता नहीं रखती। और नापनेवाला तो यदि अपने औजारोंकी बातको न माने, तो "मुंडे-मुंडे मतिभिंन्ना"—कहावतके अनुसार हर एक नापनेवाला अपना-अपना अलग ही परिणाम बतलाएगा। किसी नापी (=माप) को सच्चा मानते वक्त हम उसे परमार्थकी कसौटीपर नहीं कसने लगते, क्योंकि वह कसौटी मनुष्यकी कल्पनाके सिवा और कहीं हैं ही नहीं। न हम नापीके परिणामको विल्कुल झूठ कहकर उसे व्यवहारसे वहिष्कृत कर देते हैं। हमारा सच्चा मान वह है, जो कि भिन्न-भिन्न नापियोंका माध्यम (औसत) है। सावधानीके साथ जितनी अधिक नापियाँ की जायँगी, माध्यम उतना ही ठीक होगा। और जो नापी इस माध्यमके समीप होगी, वही सत्य होगी।

इन बातोंसे यह तो पता लग गया, कि तार्किकोंने वास्तविकताकी अच्छी तरह छान-बीन किए विना जो सिर्फ तर्कसे कुछ बातोंको 'स्वयंसिद्ध' कह डाला है, वह उन्हींके शब्दोंमें मान लेने लायक नहीं है। हमारी उक्त परिभाषाएँ ठीक हो सकती हैं, यदि उन्हें परमार्थ-सत्य मनवानेकी जगह हम सापेक्ष सत्य कहें। अधिक वक्रकी अपेक्षा कोई रेखा सरल हो सकती है, अधिक मोटे विन्दुओं या अत्यन्त क्षुद्र रेखाओंकी अपेक्षा किसी विन्दुकी लंबाई-चौड़ाईको हम नगण्य समझ सकते हैं। हमारे सभी नाप-तौल सापेक्ष हैं, परमार्थ मनकी कल्पना मात्र है। परमार्थको प्राकृतिक वस्तुओं और नियमोंपर जब हम लादनेकी कोशिश करते हैं, तो यही नहीं कि हम वस्तु-सत्य—'ठोस' जगत्—को छोड़ आकाशमें उड़ने लगते हैं; बल्कि उल्टी धारणाओंके शिकार होते हैं।

लेकिन, वस्तुओं और उनके गुणोंकी सापेक्षताका मतलब यह नहीं है कि हम उनकी सत्तासे इन्कार कर दें। सापेक्षता परमार्थ-नामधारी किसी भी पदार्थको सिद्ध नहीं होने देती; किन्तु सापेक्षता द्वारा सत्तासे इन्कार करवाना तो उसकी सीमासे बाहर जाना है। सापेक्षता आखिर माननी क्यों पड़ती है? इसीलिए तो कि वस्तु-सत्ता हमें वैसा माननेके लिए मज-

दूर करती है। फिर धर्मकीर्तिके शब्दोंमें, "यदि वस्तुओंको यही पसन्द है, तो हम कौन हैं" ?[1] वस्तुसे दूर परमार्थ-सत्य ढूँढ़नेके फेरमें हम क्यों मरते हैं ?

अब मूल विषयपर आइए।

(१) ईथर

उन्नीसवीं सदीके वैज्ञानिकोंके सामने बड़ा प्रश्न यह था: सूर्य, ग्रहों, ताराओंके बीच जो इतनी खाली जगह है, उसमें किरणें कैसे एक जगहसे दूसरी जगह जाती हैं ? हमारी पृथ्वी-जैसे बहुत कम आकाशीय पिंड हैं जिनके पास अपना वायुमंडल है, और जहाँ वह है भी, वहाँ कुछ सौ मीलोंका है, जिससे प्रकाशकिरणोंके फैलनेकी समस्या हल नहीं होती। प्रकाश भी कोई भारहीन चीज नहीं है। एक वर्गमील क्षेत्र पर प्रति-मिनट आधी छटांक (ढाई तोला या एक औंस) सूर्यकी किरणें गिरती हैं, और इस भारका वहाँ दबाव भी पड़ता है। पिछली सदीमें प्रकाशको कणोंसे बना माना जाता था। आज उसे कण-तरंग दोनोंके गुणोंसे युक्त माना जाता है। इन तरंगोंकी भिन्न-भिन्न लम्बाइयाँ और दोलन हैं, यह हम आगे बतलाएँगे प्रकाशकिरणें तीन लाख किलोमीटर (१८६ हजार मील) प्रतिसेकेंडके वेगसे चलती हैं। इस प्रकार आकार-भार-दबाव रखनेवाली किरणोंके एक तारेसे दूसरे तारे या ग्रह तक पहुँचनेके लिए—और आकाशीय पिंडोंके तैरनेके लिए भी—एक माध्यमकी अनिवार्य जरूरत थी। इसके लिए ईथरकी कल्पना की गई। ईथर तारों, ग्रहों और दूसरे आकाशीय पिंडोंकी खाली जगहोंमें ही भरा नहीं है, बल्कि अत्यन्त सूक्ष्म परमाणुके भीतर जो अधिकांश खाली जगह है, वहाँ भी वह व्याप्त है। वह एक अभौतिक नहीं, भौतिक पदार्थ है—उसमें खास परिमाणकी लचक और घनता है। हाँ, इस लचक और घनताका परिमाण जो बतलाया जाता

---

[1] यदीदं स्वयमर्थानां रोचते तत्र के वयम्।—प्रमाणवार्तिक २।२०९

था, वह सन्देहजनक जरूर था, यद्यपि उस वक्त दूसरी समस्याओंके कारण उसकी ओर विद्वानोंका ध्यान नहीं जा सका था।

एक नाव नदीके इस पार आती है, उसे खूँटेसे बाँध दिया जाता है। पतवार माँगेपर इस तरह डाल दिया जाता है कि उसकी थापी नावसे बाहर निकली रहती है। उससे जलकी बूँदें टपक रही हैं। हर एक बूँद गिरकर पानीमें एक वृत्त बनाती हैं, जिसकी परिधि आकारमें बढ़ती हुई पानीपर अग्रसर होती है। जैसे-जैसे एक बूँदके बाद दूसरी बूँद टपकती है, वैसे ही एकके बाद दूसरे वृत्त बनते हैं, और ये बढ़ते हुए भी पहिले वृत्तसे छोटे तथा एक ही केन्द्रबिन्दुवाले—समकेन्द्रक होते हैं। यद्यपि इन वृत्तोंके व्यास लगातार बढ़ रहे हैं, तो भी उनके व्यासोंकी एक दूसरेके साथ कमी-बेशी एक-सी रहती है, क्योंकि उनके अग्रसर होनेकी एक-सी गति है। अब नाव खोली जाती है, पतवारको वैसे ही पड़ा छोड़कर मल्लाह उसे लग्गीसे चलाता है। बूँदें अब भी गिर रही हैं, किन्तु एक जगह नहीं, इसलिए वृत्त एक-केन्द्रवाले नहीं हैं, और उलझाए छल्लोंकी भाँति आगे बढ़ रहे हैं। वैज्ञानिक कह रहे थे कि पतवारकी स्थिति गिरी हुई बूँदोंके वृत्तोंकी गतिपर जिस तरह कोई प्रभाव नहीं रखती, उसी तरह प्रकाशका उद्गम—आकाशीय पिंड (सूर्य) प्रकाशकी गतिपर कोई प्रभाव नहीं डालता। हर छूटनेवाली प्रकाशकिरण उसी १,८६,००० मील प्रति-सेकेंडकी चालसे चलती रहेगी। फिर सवाल था, बूँदके वृत्तोंकी चालको जिस प्रकार जल अपनी घनताके कारण रुकावट डालकर कम करता जाता है, क्या उसी तरह ईथर प्रकाश-किरणोंकी गतिमें फर्क नहीं डालेगा? लेकिन वेध बतलाता था कि प्रकाश-गति दूर या नजदीक सभी दिशाओंमें समान अर्थात् १८६ हजार मील प्रति सेकेंड रहती है, यह नहीं होता कि कुछ लाख मीलोंकी दूरीसे आनेवाला प्रकाश ज्यादा द्रुतगामी हो और करोड़ों, अरबों, खरबों, नीलों प्रकाश-वर्षोंसे आनेवाला मन्दगामी। यह क्यों? इसका उत्तर वे सिर्फ यह दे सकते थे कि ईथरकी घनता इतनी कम है कि प्रकाश-गतिपर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता, वह

उसके लिए शून्य-सी है, और उसमें तैरनेवाले आकाशीय पिंडोंकी गति उसकी विद्यमानतासे नहीं घटती-बढ़ती। ईथर भौतिक वस्तु भी हो और उसमें घनता और तरंग-प्रवाहिता भी हो, किन्तु वह किरणों और आकाशीय पिंडोंकी गतिपर असर न डाले, यह बात युक्तिसंगत न थी। तो भी वैज्ञानिक 'माध्यम' के ढूँढ़नेमें इतने परेशान थे कि वह ईथरको छोड़ नहीं सकते थे। जहाँ-जहाँ माध्यमकी दिक्कतें आईं वहाँ-वहाँ उन्होंने खास गुणोंवाले ईथरोंकी कल्पना की। यहाँ तक कि शरीरके एक भागकी सूचना दूसरे भाग तक कैसे पहुँचती है, इसके लिए भी उन्होंने एक खास ईथरकी कल्पना की। संक्षेपमें, समस्याओंकी वृद्धिके साथ समाधान करनेवाले ईथरोंकी संख्या भी सैकड़ोंपर पहुँच गई। इतनेपर भी ईथर उन्नीसवीं सदीके साइंसकी सबसे बड़ी देन समझा जाता रहा।

(२) गुरुत्वाकर्षण

न्यूटनका गुरुत्वाकर्षण भी जहाँ सेवके जमीनपर गिरनेका कारण था, वहाँ ज्वार-भाटेकी गति, पृथिवीकी वर्तमान आकृति, चन्द्रमाकी पृथिवीके गिर्द परिक्रमा, पृथिवी, बृहस्पति ग्रहोंका सूर्यके गिर्द घूमना—आदि बहुत-से प्रश्नोंका एक ही हल समझा गया। गुरुत्वाकर्षण प्रकाश, बिजली, और चुम्बककी भाँति एक भौतिक वस्तु माना गया था। लेकिन जहाँ प्रकाश आदिके एक जगहसे दूसरी जगह पहुँचनेमें देर लगती है, तेज होनेपर भी उनकी एक परिमित गति है, वहाँ गुरुत्वाकर्षणको एक जगहसे दूसरी जगह जानेमें कोई समय नहीं लगता, हालाँ कि पिंडके साथ संबद्ध होने तथा उसकी गतिके साथ गति करनेके कारण ऐसी वस्तुकी कोई सीमित गति होनी ही चाहिए जो सर्वव्यापक नहीं है। गुरुत्वाकर्षणको यदि सर्वव्यापक माना जाए तो उसके लिए खास पिंड कोई विशेषता नहीं रखता, और फिर उसकी स्वतंत्र सत्ता माननी ही पड़ेगी। बिजली, चुम्बक और एक्स-रे को भी आड़ देकर किसी जगह पहुँचनेसे रोका जा सकता है, किन्तु गुरुत्वाकर्षणको रोकनेवाली कोई आड़ नहीं, यह भी माना जाता था।

(३) काल

परिवर्तनमें काल इस तरह मिश्रित है कि उसे परिवर्तनसे अलग नहीं किया जा सकता। लंबाईमें एक जगहसे दूसरी जगहके परिवर्तनको हम काल (मिनट-घंटे)में बतलाते हैं। और कालमें परिवर्तनके लिए लंबाईकी सहायता लेते हैं, अर्थात् इतना काल जिसमें काँटेने घड़ीके डायल-पर बारहसे चार बजेकी दूरीको तै किया। कालपर विचार करते वक्त हमारा ध्यान उसे एक स्वतंत्र सत्ता माननेकी ओर इतना उतावला रहता है, कि हम इसपर जरा भी ध्यान नहीं देते कि देश और काल परिवर्तनको नहीं लाते, बल्कि परिवर्तन उनका जन्मदाता है। कालकी सत्ता सिद्ध करनेके लिए पृथिवीका घूमना हमारा मानदंड है। उस वक्त हम यह ख्याल नहीं करते कि सूर्य भी घूम रहा है, तारे भी घूम रहे हैं, आकाशगंगा भी घूम रही है, विश्व भी घूम रहा है; फिर ऐसी स्थितिमें किसी एक चीजके घूमनेका परिणाम सापेक्ष ही मिल सकता है, परमार्थ घूमना मालूम करना असंभव है। ऐसे घूमनेसे परमार्थ काल[1]की कल्पना कभी युक्ति-संगत नहीं हो सकती। १९०५ ई०से पहिले न्यूटन-परिचालित जो काल साइंस जगतमें माना जाता था वह सापेक्ष नहीं परमार्थ काल था, उसकी सत्ता किसीपर निर्भर नहीं थी, वह एक स्वतंत्र द्रव्य था। और ऐसे दार्शनिक तो अब भी मिलेंगे, जो कालको मन-द्वारा अनुभूत एक स्वतंत्र वस्तु सिद्ध करना चाहते हैं, यद्यपि हम जानते हैं कि यह अनुभव सबका एकसा नहीं है। मस्तिष्क जिसका जितनी ही तेजीसे काम कर रहा होता है, उतना ही उसे काल ज्यादा बीता मालूम होता है—बुखारमें आदमीको घड़ी भरका समय युग-युग जैसा जान पड़ता है।

(४) देश

वस्तुएँ कालकी तरह देश (या दिशाओं)में भी रहती हैं। गतिको

---

[1] Absolute Time.

परमार्थ माननेपर देशको भी परमार्थ मानना जरूरी था। किन्तु वस्तुतः विश्वमें गति सापेक्ष है। साठ और बीस मीलकी चालसे दो मोटरें जा रही हैं। सड़कको बिना देखे जैसे कहा जाता है कि वह एक दूसरेको चालीस मील प्रतिघंटेके हिसाबसे पीछे छोड़ रही हैं, वैसे ही सभी आकाशीय पिंड और उनके कारण उनपरकी वस्तुओंको भी सापेक्ष-गति मानी जा सकती है।

सापेक्षतावादसे पहले ईथर, गुरुत्वाकर्षण, काल, देशके बारेमें जिस तरह धारणा चली आई थी, वह आंशिक या पूर्ण रूपसे स्थिर जगत्के लिए भले ही उपयुक्त होती, किन्तु जब सारा जगत्—विश्व-अंड (ब्रह्मांड)से लेकर न्यूट्रन और एलेक्ट्रन तक—भीषण-वेगसे चक्कर काट रहा है, उस वक्त इन परमार्थोंको रखनेपर गुत्थियाँ सुलझनेकी जगह अधिक उलझती ही जा रही थीं, इनको सुलझाना और पहलेकी धारणाओंको हटाना सापेक्षतावादका ही काम है।

आइन्स्टाइन्ने अपनी **सीमित-सापेक्षता**में बतलाया है कि काल और देशकी जो धारणा अभी तक बनी है, उसमें उसी तरह एक बार जबर्दस्त परिवर्तनकी जरूरत है, जैसा कि गेलेलियो और न्यूट्रनकी कृतियोंने दो-तीन सदियों पूर्व किया था। सापेक्षतावाद कालसे इन्कार नहीं करता, यदि ऐसा करता, तो घटनाओंके पीछेके क्रमको उलटने या एक समयमें रख सकनेका दावा करना पड़ता। वह इन्कार करता है कालकी परमार्थ-सत्तासे। मान लीजिए, एक दूसरेसे लाखों प्रकाश-वर्षकी दूरीपर दो चक्कर-दार नीहारिकाओं (क, ख)में विस्फोट हुए और वहाँ दो नये तारे उत्पन्न हुए। इन नीहारिकाओंमें



चित्र २०

उपस्थित दर्शकोंके लिए अपने यहाँकी घटना तुरंत हुई मालूम होगी, किन्तु दोनोंके बीच लाखों प्रकाश-वर्षकी दूरी होनेसे क का दर्शक ख की घटनाको एक लाख वर्ष बाद घटित हुई कहेगा, जब कि दूसरा

दर्शक अपनी घटनाको तुरन्त और क की घटनाको एक लाख वर्ष बाद घटित होनेवाली बतलाएगा। इस प्रकार विस्फोटका परमार्थ-काल नहीं, सापेक्ष-काल ही बतलाया जा सकता है। सापेक्षताका कहना है कि ऐसे झगड़ेका निपटारा किसी परमार्थ सत्यको दिखलाकर नहीं किया जा सकता, क्योंकि घटनाके वाहक प्रकाशसे अधिक द्रुतगामी दूत हमें कोई नहीं मिल सकता; और प्रकाश हमें सापेक्ष-कालकी ही सूचना देता है। परमार्थको न पानेसे व्यवहारमें कोई क्षति नहीं, क्योंकि व्यवहार सापेक्ष-घटनाको ही अपने लिए पर्याप्त समझता है। वस्तुतः सापेक्षतावादका एक बड़ा उद्देश्य यह भी है कि 'वाद' (=सिद्धान्त)को प्रयोग या व्यवहारके साथ मिलाया जाए। भारत और अमेरिकामें रहनेवाले दर्शक रेखागणितके अचल देश और न्यूटन तथा हमारे कितने ही दार्शनिकोंके परमार्थ-कालमें देखनेपर किसी घटनाके एक समय (एक क्षण)में होनेके बारेमें एकमत नहीं हो सकते। दोनोंमें किसीके पक्षमें निर्णय नहीं दिया जा सकता, क्योंकि निर्णयके लिए परमार्थ स्थिरता (निश्चल मान) विश्वमें न है, न सिद्ध की जा सकती है। एक-कालीनता और स्थिरता दोनों ही परमार्थ रूपमें लेनेपर सिद्ध होनेवाली वस्तुएँ नहीं हैं। वे दर्शन, अध्यात्मशास्त्रकी कोरी दलील-बाजी या आत्मवंचनाका विषय भले ही हो सकती हैं, किन्तु साइंसीय गवेषणाका उनसे कोई संबंध नहीं। कारण, प्राकृतिक वस्तुओंके परे, मनकी कल्पना-द्वारा निर्मित, देश-कालकी ऐसी सत्ताका कोई सुबूत नहीं मिलता, जिसकी कि अपने भीतर घटनेवाली घटनाओंके अतिरिक्त भी अपनी विशेषता हो।

यहाँ देश-कालकी सापेक्ष-सत्तासे इन्कार नहीं है, जैसा कि आइन्स्टाइन्के सिद्धान्तके प्रकाशित होनेसे एक या दो वर्ष पहिले लेनिन्ने लिखा था—"देश और कालके संबंधमें मनुष्यके विचार सापेक्ष हैं, किन्तु सापेक्ष विचारोंके आधारपर हम परम सत्य तक पहुँच सकते हैं। उनके संबंधके ये सापेक्ष विचार उनके विकासमें परम सत्यकी दिशाकी ओर अग्रसर हो रहे हैं, और लगातार उसके अधिक नजदीक होते जा रहे हैं। देश-काल

संबंधी मानव-विचार बदल रहे हैं, इससे उनकी सत्ताका प्रतिषेध उसी तरह नहीं होता, जिस तरह कि गति-शील भौतिक तत्त्वोंके ढाँचे और आकार संबंधी साइंसवेत्ता ज्ञानमें परिवर्तन होनेसे बाह्य जगत्के वस्तु-सत्य होनेका प्रतिषेध नहीं होगा।" परम या परमार्थ-सत्य धर्मकीर्तिके शब्दोंमें वह है जो 'अर्थ-क्रियामें समर्थ है'—'अर्थ-क्रिया-समर्थ यत् तदत्र परमार्थसत्' (प्रमाणवार्तिक, ३।२)।

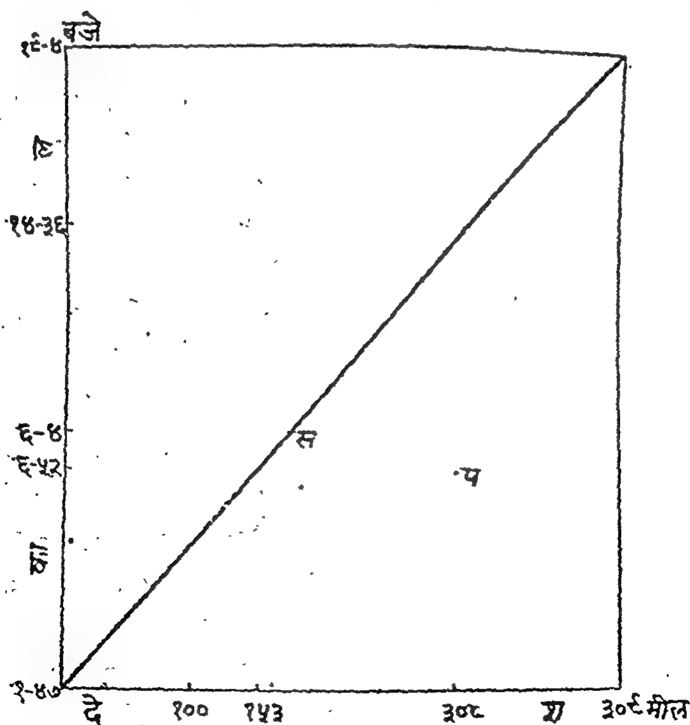
पहलेके साइंसवेत्ता ताराओंको स्थिर समझकर देश (दिशा)की सत्ताको परमार्थरूपेण ले सकते थे। ताराओंके ढाँचेमें पृथिवीके कक्षा-भ्रमणका अपना एक खास देश बतलाया जाता है; किन्तु हम जानते हैं कि ऐसा कोई खास निश्चित देश नहीं है। ताराओंका वह "स्थिर ढाँचा" खुद घूम रहा है। हम और हर्कुल तारा-मंडल एक-दूसरेकी ओर बड़ी तेजीसे दौड़ रहे हैं, यह बात वेधसे सिद्ध है, लेकिन 'परमार्थ'-देशकी अपेक्षासे किसी आकाशीय पिंडका वेध कभी नहीं मिला। ऐसी कोई नापी हुई गति मौजूद नहीं, जिसे हम मोटे तौर पर भी कह सकें कि वह देशमें पृथिवीकी परमार्थ-गति है। सापेक्षता बतलाती है कि कोई वस्तु या घटना जो वेधसे सिद्ध नहीं है, वह है ही नहीं। वाद या सिद्धान्तसे प्रयोगको अधिक प्रमाणिक मानना सापेक्षताकी एक खास विशेषता है। 'परमार्थ'-देश या 'परमार्थ'-एक-कालीनता—जिनको वेध-द्वारा, प्रयोग-द्वारा सिद्ध नहीं किया जा सकता—सिर्फ श्रद्धावश ही मानी जा सकती हैं।

उन्नीसवीं सदीके भौतिकशास्त्री जिस ईथर को अपनी सारी समस्याओंका हल समझते थे, वह यही 'परमार्थ'-देश (दिशा या आकाश) था, जो कि किसी भी प्रयोगसे सिद्ध नहीं होता था; न करोड़ों वर्षोंकी यात्रा करके आनेवाली द्रुतगामिनी प्रकाश-किरणोंपर उसका कोई प्रभाव था, और न उसमें तैरते कहे जानेवाले आकाशीय पिंड हजारों मील प्रतिघंटेकी चालसे चलते हुए भी उससे प्रभावित होते थे। आगे मालूम होगा कि स्थूल-सूक्ष्म सारा जगत् विद्युत्-चुम्बकीय तत्त्व है। वह चाहे ग्रह या ताराके रूपमें हो, चाहे प्रकाश-किरणके रूपमें, उसका अपना सापेक्ष-आकाश है। वह

आकाश उस तत्त्वसे अलग नहीं है बल्कि उसका अभिन्न अंग है। भौतिक तत्त्वोंके संकोच-विकाससे उसकी सत्ताका पता लगता है।

(५) देश-काल एक

सापेक्षताने देश-कालकी परमार्थ-सत्ताको अस्वीकार किया, क्योंकि वह वेधसे अप्रमाणित एक काल्पनिक वस्तु थी। किन्तु साथ ही उसने देश-कालको प्रकृति (=भौतिकतत्त्व)का एक अभिन्न धर्म मान लिया और बतलाया कि देश और कालके विना भौतिक पदार्थकी कल्पना ही नहीं हो



चित्र २१

सकती। भौतिक पदार्थोंके लंबाई-चौड़ाई-मुटाई ये तीन देशीय परिमाण माने जाते थे, सापेक्षताने उन्हें चौथा परिमाण कालका दिया। इस प्रकार प्रकृति अपने रूपमें चार परिमाण सदा रखती है। गतिमान् वस्तुके लिए ये चार परिमाण अनिवार्य हैं। इसको समझनेकेलिए एक उदाहरण लें:—पंजाब-एक्सप्रेस १-४७ बजे बनारस छावनी छोड़ता है, और ४३९ मीलकी यात्रा करके १९-४ बजे हावड़ा पहुँचता है। हम (चित्र २१में) आड़ी-खड़ी रेखाओंसे देश-कालके परिमाण प्रकट कर सकते हैं। आड़ी रेखा बनारस-हावड़ाके ४३९ मील-व्यापी अंतरको सूचित करेगी और उसके सिरेपर खड़ी हुई लंब-रूप रेखा १-४७से लेकर १९-४ बजे तक वक्तके फ़ासलेको। इनके बीच कर्णके रूपमें एक और रेखाके द्वारा हम रेल-गाड़ीकी यात्राकी कल्पना कर सकते हैं। इस रेखापर 'स' वह स्थान होगा जहाँ ट्रेन ८-४ बजे पहुँचती है और जो १८१वें मीलके ऊपर है। आसनसोल ३०८वें मील पर है। उसके नजदीक कोई 'प' स्थान भी हो सकता है, मगर उसे हम कर्णपर जगह नहीं दे सकते, क्योंकि उसके अनुसार ६-५२ बजे गाड़ी आसनसोल नहीं पहुँचती। हमारा यह चित्र बनारस-हावड़ाके मध्यवर्ती समस्त स्थानों और गुजरनेवाले सारे वक्तको प्रकट करेगा। जिस तरह हम देश और कालके परिमाणोंको अंकित कर सकते हैं, उसी तरह अपने मनमें तीन देशीय और एक कालिक परिमाणको मिश्रित करके एक चित्र बना सकते हैं। सापेक्षतावादके व्याख्याकार मिन्कोव्स्कीका कहना है कि सभी विद्युत-चुम्बकीय घटनाएँ (एलेक्ट्रन प्रकाश-किरणोंका प्रसार) इन्हीं चार परिमाणवाले **विस्तर**[1] में हो रही हैं। वहाँ देश और काल इतने मिश्रित हैं कि उन्हें अलग नहीं किया जा सकता, जैसे ऊपर दिए रेल-यात्राके दो परिमाणोंको अलग करके नहीं देखा जा सकता। इस तरह यह **विस्तर** ऐसा है जिसमें देश-काल एक-दूसरेसे इतने मिल गए हैं, इतने पूर्णतया-एक हो गए हैं कि प्रकृति उन्हें एक अभिन्न

---

[1] Continuum.

चीज समझती है। एक-दो आदि संख्याकी सत्ता भी एक-दो आमके फलोंसे अलग प्रकृतिके यहाँ नहीं है, यद्यपि हम इसी संख्याको अलग कल्पित कर अपना गणित बनाते हैं। किन्तु साथ ही हमारे गणितकी कोई प्रमाणिकता नहीं, यदि वह पग-पगपर प्रकृतिसे मेल न खाए। और जब हम मेल बैठाने जाते हैं, तो फिर प्रकृति उसी—आमोंमें मिश्रित—एक-दो आदिके अभिन्न रूपमें उन्हें दिखलाती है।

(६) वक्रता

सापेक्ष देश-कालको अभी हमने अभिन्न देश-काल-विस्तरके रूपमें बतलाया। यह सारा विस्तर भौतिक विश्वसे पृथक् नहीं किया जा सकता। देश-काल भौतिक विश्वसे परे हो नहीं सकते, क्योंकि भौतिक विश्व ही उनके व्यवहारका कारण है। यह विस्तर चार परिमाणोंवाले—विश्वके गतिशील होनेसे उसके चौथे परिमाण 'काल'को सदा ध्यानमें रखना होगा—गोल पिंड-जैसा है। उसकी सीमाएँ नहीं हैं, किन्तु वह सान्त है, अनन्त नहीं। यदि हमारी गति उतनी तेज हो, तो भूगोलकी भाँति उसके पृष्ठपर भी चलकर हम उसी स्थानपर लौट आवेंगे। इस गोलकी रेखा-गणित यूक्लिद्-की रेखा-गणित नहीं है। इस रेखा-गणितको जर्मन गणितज्ञ रेमनने बनाया है। इस देश-काल-विस्तरके चार परिमाण वाले 'गोल'में जो वक्रता[1] है, वह भौतिक तत्त्वोंके पड़ोसमें अधिकाधिक दिखलाई पड़ती है। विश्वमें सीधी रेखाका पता नहीं है, यह हम कह आए हैं। आदतवश ही हम वृत्तके क्षुद्र अंशको सरल-रेखा मानते हैं, और जब आकाशीय पिंडोंको सरल-रेखासे न जाते देख उन्हें वृत्तके चापपर मुड़ते देखते हैं, तो उस मुड़नेको गुरुत्वाकर्षणका नाम दे देते हैं। पृथिवी, चन्द्रमा, ग्रह, केतु, सूर्य सभी इसी स्वाभाविक वक्रता (गोलाई)के कारण वक्र (गोल)-पथपर चल रहे हैं। उसी पथको हम आसानीके लिए नक्षत्र-जगत्में निश्चित स्थान

---

[1]Curvature.

और निश्चित आकार—वृत्त, दीर्घवृत्त—कहने लगते हैं। किन्तु विश्वके भीतर जैसी गति अभी हम बतला चुके हैं, उससे ऐसी निश्चित आकृति सिद्ध नहीं हो सकती। फुटबाल जमीनपर गिरता है, उसका कारण भी वही वक्रता है। विश्वके कोने-कोनेमें, हर गतिमें वह वक्रता मौजूद है। प्रकाश-किरणें भी इसी वक्रतामें चलती हैं। यदि किरणों या आकाशीय पिंडों को किसी माध्यमकी आवश्यकता हो, तो यह चार परिमाणों वाला वक्र **विस्तर** मौजूद ही है, जिसकी सत्ता गतिके वेधसे सिद्ध है। उसके अतिरिक्त किसी ईथर-जैसे माध्यमकी कोई आवश्यकता नहीं। जिसकी सत्ता वेध-सिद्ध नहीं है, और जो समस्याओंको सुलझानेकी जगह दुरूह और नई समस्याएँ पैदा करता जाता है, उसको मानना व्यर्थ है।

आइन्स्टाइन्‌ने इस वक्रताको सिद्ध करनेके लिए तीन कसौटियाँ बतलाई हैं—

(१) ग्रहोंकी कक्षाएँ उस तरहकी दीर्घ-वर्तुलाकार (अंडाकार) नहीं हैं, जैसी कि उन्हें हम अबतक समझते आए हैं; बल्कि उस वक्रताके कारण वे कुछ भेद रखती हैं जिसे हम गणितसे जान सकते हैं। शुक्रकी कक्षा, ज्ञात कारणोंसे जिस प्रकारकी होनी चाहिए वैसी नहीं है, उसमें फर्क पाया जाता है, और सापेक्षतासे पहले उस फर्कका कोई समाधान नहीं मिला था। सापेक्षताने उसका समाधानकर अपनेको प्रमाणित किया।

(२) प्रकाश-किरणें सूर्य जैसे विशाल पिंडके पाससे गुजरती हैं। पृथिवीसे देखते हुए जो पथ हमें सीधा मालूम होता है, उससे वे हटकर चलती हैं—कितनी हटकर चलती हैं इसे भी आइन्स्टाइन्‌ने गणना करके बतलाया है। सूर्यके पिछले दो पूर्ण-ग्रहणोंके वेधसे इस बातकी पुष्टि पूरी तौरसे हो चुकी है।

(३) ताराओंके रश्मिवर्ण[1]में पाई जानेवाली रेखाएँ सातों रंगोंमें जिधर लाल छोर है, उधर हटी हुई दिखलाई पड़ती हैं। यह घटना

---

[1] Spectra.

गतिके कारण होनेवाले हटनेसे अलग है। इसकी मात्राको भी गणितसे बतलाया जा सकता है, यदि उक्त ताराओंकी पिंड-मात्रा[1] और दूरी ठीक-ठीक मालूम हो। यह परीक्षा ज्यादा कठिन साबित हुई तो भी जो परिणाम निकला है वह संतोषजनक है।

(७) वेग

उदयन (९८४ ई०)ने वेग[2] को समझाते हुए कहा है—"वेगसे रुकावट होनेके कारण बाहर फेंके हुए तीर आदि (नीचे) नहीं गिरते"[3] आजकलके साइंसवेत्ता पिंडके उस गुण (=धर्म)को वेग कहते हैं, जिसके कारण उसकी गतिकी अवस्थाको बदलनेके लिए शक्तिकी जरूरत पड़ती है, चाहे वह बदलना सिर्फ गतिको घटाने-बढ़ानेके लिए हो अथवा दिशा पलटनेके लिए। हम मोटर या दूसरी तेज सवारीपर जाते वक्त अनुभव करते हैं कि कोई 'शक्ति' हमें मजबूर कर रही है, एक खास आसनसे—हाथ-पैर, सिर-शरीरको खास स्थितिमें करके—रहनेके लिए। वस्तुतः वहाँ कोई ऐसी शक्ति है नहीं। हर एक चलनेवाली वस्तुका अपना अलग आकाश (देश) होता है, जो उसके आकारके अनुसार होता है। रेलगाड़ीमें वह 'आकाश' बड़ा होता है, मोटरपर छोटा, साइकिलपर और छोटा। बाहरके हमारे परिचित आकाशसे यह आकाश अलग होता है, इसका हमें तब पता लगता है, जब ट्रेनके भीतरी आकाशकी शरीरस्थितिके साथ हम बाहरवाले आकाशमें जानेकी कोशिश करते हैं और गिरकर हाथ-पैर तोड़ लेते हैं। चलते हुए पिंडकी अपने लिए एक खास 'आकाश' बनानेकी इसी प्रवृत्तिको वेग कहते हैं। वेग और गुरुत्वाकर्षणमें बहुत समानता है। दोनों अपना 'आकाश' बनानेमें एक-से हैं। जो भी पिंड गति कर सकते हैं, उन्हें उसी 'आकाश'में गति करना होता है, और उसीकी

---

[1] mass. [2] inertia. [3] "वेगेन प्रतिबन्धादपतनं बहिःक्षिप्तस्य शरशलाकादेः"—न्यायकन्दली।

मात्रामें ही द्रुतगामिताको स्वीकार करना पड़ता है। यह इसीसे स्पष्ट है कि सड़कके किसी स्थानको पहिया जिस चालसे छोड़कर आगे बढ़ रहा है, सवार भी उसी चालसे उसे छोड़ रहा है।

गुरुत्वाकर्षण और वेगमें इतनी समानता इसलिए है कि दोनों एक ही प्राकृतिक घटनाके दो रूप हैं। न गुरुत्वाकर्षण ही किसी शक्तिसे पैदा हुआ है और न वेग ही। परमार्थ आकाश (देश) प्रकृतिमें है ही नहीं, यह हम कह आए हैं। उसकी जगह सभी सापेक्ष स्थिति रखनेवाले पिंड अपना-अपना आकाश—सापेक्ष आकाश—रखते हैं। चलती हुई भिन्न-भिन्न मोटरोंका अलग-अलग आकाश है, यह हम यात्रा करते वक्त अनुभव करते हैं।

पिंडोंकी गति 'आकाश' या वेगको पैदा करती है। पृथिवीपर २५-५० मील प्रतिघंटेकी चालसे चलनेवाली सवारियोंके वेगका हमें अनुभव है। आकाशीय पिंडोंके 'वेग'को जाननेके लिए हमें याद रखना चाहिए कि पृथिवी ६४ हजार मील प्रति घंटेकी चालसे अपनी कक्षापर भाग रही है। सूर्य प्रायः ६७ हजार मील और तारे १८ हजार मील और अधिककी चालसे सर्राटे मार रहे हैं। इनके पिंड कितने विशाल हैं इसे भी जरा ध्यानमें रखिए और फिर अन्दाजा लगाइए कि उनके वे पिंड और यह गति अपने-अपने लिए कितना बड़ा आकाश या वेग बनाएँगे। आइन्स्टाइनकी सापेक्षताके पहले इसी 'वेग'को हम गुरुत्वाकर्षणका नाम दे रहे थे; जिसे मानकर सौरपरिवार तक तो अब भी काम चलाया जा सकता है, किन्तु सारे विश्वका विचार करनेपर उसे वेग या चार परिमाण वाली वक्रता कहना ही ठीक होगा।

भौतिक तत्त्वोंकी मात्राको पृथिवी, सूर्य आदिके पिंडोंके गुरुत्वाकर्षणके कारण बड़ा छोटा कहा जा रहा है। हम कह आए हैं कि चन्द्रमाकी पिंड-मात्रा पृथिवीका पचासवाँ हिस्सा है, इसलिए परमाणु-भार एक-सा रहने पर भी पृथिवीपर सौ सेरकी भारी चीज वहाँ दो सेरकी ही रह जाती है। इस भेदका कारण न्यूटनीय भौतिक शास्त्रमें पिंडका गुरुत्वाकर्षण कहलाएगा

किन्तु सापेक्षता पिंडके वेगको इसका प्रकृत कारण बतलाती है। गतिके कारण एक ही वस्तुकी मात्रा बढ़ जाती है, यह बात प्रयोगसे सिद्ध है। इस प्रकार सापेक्षताने भूत-मात्रा के 'परमार्थत्व' पर भी प्रहार किया।

१९०५ ई०से १९१५ ई० तक आइन्स्टाइन्ने सापेक्षताका प्रयोग सीमित क्षेत्रमें किया था, इसीलिए उसे **'सीमित-सापेक्षता'** कहते हैं। १९१५ ई०के बाद उसका प्रयोग सीमित क्षेत्रसे बढ़ाकर साधारण क्षेत्र तक करके आइन्स्टाइन्ने बतलाया कि वेग विश्वव्यापी है और वही किसी स्थानमें गुरुत्वाकर्षणकी भाँति मालूम होता है; भूत-मात्रा कोई अचल मात्रा नहीं है, वेग उसे घटा-बढ़ा सकता है; घटनाओंकी एक-कालीनता सिद्ध नहीं की जा सकती—इत्यादि। इसे ही **'साधारण-सापेक्षता'** कहते हैं।

---

[1] Mass.

द्वितीय अध्याय

परमाणुमय जगत्

पिंड, भौतिकतत्त्व, परमाणु, नाभिकरण टूटनेसे उत्पन्न कण, न्युट्रेन, कुछ परमाणु, परमाणुओंसे पदार्थ-रचना, कार्वनके योग।

विशाल विश्वको हम देख चुके, अब हमें सूक्ष्म विश्वकी ओर नजर दौड़ानी है। विश्वकी विशालताको नापनेके लिए हमें प्रकाश-वर्ष[1]की जरूरत पड़ी, और उतनेपर भी उसे अच्छी तरह चित्तपर अंकित करना मुश्किल रहा; क्योंकि विशालताका ज्ञान भी तुलनासे होता है, और विश्वकी विशालताकी किसी प्रत्यक्ष पर्वत, रेगिस्तान, समुद्र जैसी वस्तुओंसे हम तुलना नहीं कर सकते। सूक्ष्मताको जतलानेके लिए यदि हम खसखस या सरसोंके दानेके साथ रखकर बतलाते, तो हमारे लिए आसानी होती किन्तु दिक्कत यह है, कि विशालतामें सारे सौरपरिवारको पहाड़ या किसी बड़ेसे-बड़े गोलसे तुलना करना मुश्किल था; और यहाँ खसखस को तो प्रत्यक्ष देखा जा सकता है, किन्तु जिस परमाणुके लिए हम इसकी उपमा दे रहे हैं, अत्यन्त सूक्ष्म होनेके कारण वह परमाणु[2] आँखसे दिखाई नहीं पड़ता। तो भी यदि आँकड़ों और उपमाओंकी मददसे मनपर उसका चित्र खींचनेकी कोशिश करें, तो धीरे-धीरे उस तरह देखना आदतमें शामिल हो जावेगा। विशाल विश्वकी सैर करनेमें ही नहीं, उसके रहस्यों-को खोलनेमें भी जैसे दूरबीन, स्पेक्ट्रास्कोप[3] (रश्मिवर्ण-दर्शक) और फोटो-ग्राफीने मदद दी; उसी तरह यहाँ परमाणुके और उसके भीतरी जगतको

---

[1] Lightyear. [2] Atom. [3] Spectrascope.

जाननेके लिए अणुवीक्षण[1], अणुफोटोग्राफी, साइक्लोट्रोन हमारे सहायक हो रहे हैं।

§ १. पिंड

पिंड लम्बाई, चौड़ाई, मुटाई रखनेवाली तथा आँखोंसे दिखलाई देनेवाली वस्तुको कहते हैं। पिंड उन अणुओंके पुंज हैं जो कि स्वयं अनेक परमाणुओंसे मिलकर बने हैं। पिंड ठोस, तरल और वाष्प[2] (गेस)—इन तीन अवस्थाओंमें जाते हैं। स्थिरसे स्थिर पिंडके भीतर भी अणु चलते रहते हैं। उनकी यह गति पिंडकी गतिसे स्वतंत्र है। इसका उदाहरण बिजलीसे तेज चल रही पंखियोंको जोड़कर बनी निश्चल आकृति, अथवा सर्राटेसे रोशनीके सामनेसे हटती सिनेमा-तस्वीरोंसे बने निश्चल प्राकृतिक दृश्यसे हम दे चुके हैं। साधारण तापमानमें भी यह अणु-गति जारी है, किन्तु तापमानके बढ़नेके साथ यह और बढ़ जाती है।

१. तरल, वाष्प

ठोस, तरल और वाष्पीय अवस्थाएँ वस्तुतः पिंडके भीतरी अणुओंकी गतिकी कमीबेशीके कारण हैं। प्रत्येक अणु जिन परमाणुओंसे बना है, वह एक दूसरेसे सटे नहीं हैं, उनके बीचमें काफी फासिला—खाली जगह—है। परमाणुके भीतर जो नाभिकण और एलेक्ट्रन हैं, वे एक दूसरेसे बहुत दूरपर होते हैं, यह आगे बतलायेंगे। यहाँ इतना ध्यान रखना काफ़ी है, कि यदि दो मनके छै फुटे आदमीके शरीरके परमाणुओं, एलेक्ट्रनोंको दबाकर एक दूसरेसे सटा दिया जाये, तो वह शरीर इतना छोटा हो जायगा कि उसे देखनेके लिए अणुवीक्षणकी ज़रूरत होगी। परमाणुओंके भीतर एलेक्ट्रन ऋणात्मक बिजलीके कण हैं, और वह पास आनेवाले दूसरे कणको बाहरकी ओर ढकेलते रहते हैं। हवा-भरा फुटबालका

---

[1] Microscope. [2] Gas.

गेंद दवाये जानेसे नहीं दवता, ठोससा मालूम होता है। हवा-भरा मोटा टायर तो इतना कड़ा हो जाता है, कि उसे सैकड़ों मनका बोझ भी नहीं पिचका सकता। इसी तरह परमाणुके भीतरकी वह ऋणात्मक विजली उससे वनी चीजोंको फुलाकर रखती है। यह आन्तरिक विजली अणुओंको खास परिमाणमें दूर और नजदीक जाने देती है और उसीपर पिंडकी उक्त तीनों अवस्थाएँ निर्भर हैं। भीतरी विजलीकी शक्तिका घटना-वढ़ना पिंडके तापमानपर निर्भर है। उवालविन्दु (१००° सेंटीग्रेड=२१२° फार्नहाइट)से अधिकके तापमानमें अणुओंके धक्केके कारण जलके अणुओंकी गति इतनी तीव्र हो जाती है, कि वह पहिले एक दूसरेसे जितनी दूरी और जितनी सीमामें अपनी गति जारी रखते थे, उसमें गड़बड़ी पड़ जाती है; वह दूरसे दूर जानेके लिए मजवूर हो जाते हैं।

उवालविन्दुसे शून्य (हिम)-विन्दु (०°सेंटीग्रेड--३२°फार्न०)=तक अणुओंको नजदीक रखनेवाली—योजक-शक्ति[१] उन्हें मिलाकर पिंडके रूपमें रखे रहती है, साथ ही तापगतिको अधिकार रहता है, कि वह अणुओं-को मन्द किन्तु अनियमित चालसे फिरावे। इसीको पिंडकी तरल अवस्था कहते हैं।

२. ठोस

शून्य(हिम)-विन्दु (३२° फार्न०)से नीचे उक्त योजक-शक्ति और अधिक प्रवल हो उठती है, और वह भीतरी गतिको कम करके अणुओंको कठोर स्थायी आकृतिमें चुन देती है। उस समय वहाँ इतनी ही गति वच रहती है, कि प्रत्येक अणु हल्की चालसे निरन्तर हिलता रहे। यही ठोस अवस्था है। इस अवस्थामें भीतरी गति तवतक जारी रहती है, जवतक तापमान परम शून्यविन्दु (–२७३° सेन्टी०=–४५९° फार्न०) तक नहीं पहुँच जाता। परम शून्यविन्दुपर अणुओंकी सारी गति वन्द हो

[१] Cohesion.

जाती है। तारों, ग्रहोंके बीचकी खाली जगह प्रायः सारी ऐसा ही ताप-मान रखती है। 'उबाल-विन्दु' नाम यथार्थ नहीं; वस्तुतः इसे वाष्पविन्दु कहना चाहिए, क्योंकि पानी १००° सेंटी० (=२१२° फार्न०)पर पहुँचते ही विना उवले यकायक भाप बन जा सकता है। उबलता तो इसलिए है, कि साफसे-साफ जलमें भी कुछ धूलि या कण बच रहते हैं, जिनके गिर्द बुल्बुले तैयार होते हैं। बुल्बुलोंमें हवा घुसी रहती है, उसीके दखल देने से पानीको खौलना पड़ता है।

पानीका पिघाल और उबाल-विन्दु दूसरे द्रव्योंकी अपेक्षा बहुत कम है। प्रायः जो पदार्थ जितने भारी होते हैं, उनके पिघाल और उबाल-विन्दु भी उतने ही ऊँचे होते हैं।—

	परमाणुभार	पिघालविन्दु (सेंटी०)	उबालविन्दु (सेंटी०)
पानी		०°	१००°
आक्सीजन	१६	–२२७	–१८३
क्लोरिन	३५·४	–१०२	–३४
पारा	२००·६	–३६	–३५७
गन्धक	३२·६	११३	४४५
सीसा	२०७·२	३२७	१५२५
ताँबा	६३·५७	१०८३	२३१०
सोना	१९७·२	१०३५,	१०९३°
प्लाटिनम्	१९५·२	१७५७,	१८५५

५००° सेन्टीग्रेडपर ज्वाला हल्का लाल रंग लेती है, और ५०००° पर सफेद।

कुछ पदार्थोंके वास्तविक पिघाल और उबालविन्दु हैं ही नहीं। उनके अणुओंकी बनावट ऐसी है, कि ताप बढ़नेपर जो दबाव उनपर पड़ता है, उसे बेकार करनेके लिए भीतरी परमाणु अपनी चिनाईको बदल-कर नये और सीधे-सादे अणुओंके रूपमें परिणत हो जाते हैं।

भौतिकतत्त्वोंकी गवेषणा भौतिकशास्त्र[1] और रसायनशास्त्र[2]का मुख्य विषय है। भौतिकशास्त्र परमाणु, एलेक्ट्रन, नाभिकण, प्रोटन्, न्युट्रनके सूक्ष्म ढाँचों, क्रियाओं-प्रतिक्रियाओंका अध्ययन करता है। शक्ति और गति इसका प्रतिपाद्य विषय है। रसायन-शास्त्र परमाणुओं और उनके योगसे बने अणुओं, अणुगुच्छकों तथा मिश्रित तत्त्वोंका अध्ययन करता है। शक्ति रसायनिक हो, प्रकाश या गतिकी हो, एक स्थानसे दूसरे स्थानमें, एक रूपसे दूसरे रूपमें वह भले ही बदल जाती है, किन्तु वह नष्ट नहीं होती—इसे शक्तिसंरक्षण[3] सिद्धान्त कहते हैं। मेयरने १८४२ ई०में इस सिद्धान्तको खोज निकाला। भौतिकशास्त्रका यह प्रधान विषय है। रसायनशास्त्र उन्नीसवीं शताब्दीके दूसरे महान् सिद्धान्त **तत्त्वसंरक्षण**[4]से सम्बन्ध रखता है।

भौतिक पदार्थोंका साइंसीय अध्ययन करते वक्त हम उनके एक पहलूको अलग कर लेते हैं। उदाहरणार्थ, जिस कागजपर इस लेखको आप पढ़ रहे हैं, उसके बारेमें गवेषणा करते वक्त हम सिर्फ रंग या बनावटको ले लेते हैं, यद्यपि इसके वर्त्तमान रूपके ही आकार, चिकनाहट, मुटाई, लचक, दृढ़ता, स्याही-रोशनीके लिए अनुकूलता आदिके पहलू भी यहाँ मौजूद हैं। और इसके भूत और भविष्यके इतिहासको भी लिया जाए, तो आविष्कारसे लेकर बनावट और मशीनमें तरक्की, जंगलोंका संहार आदि न जाने कितनी चीजें आ जावेंगी। फिर कागजका विश्वमें खास स्थान है। विश्वकी रचनाका वह वैसे ही एक महत्त्वपूर्ण अंग है, जैसे हजारों और पदार्थ। लेकिन यदि हम उन सभी पहलुओंपर विचार करने लग जायें, तो हमारी गवेषणा एक कदम आगे नहीं बढ़ सकती। इसीलिए साइंसीय गवेषणाके वक्त हम परीक्षय वस्तुके हजारों पहलुओंको छोड़ उसके सिर्फ एक पहलूको लेते हैं। ऐसे परीक्ष्य पदार्थको हम **एकाकी**[5]

---

[1] Physics. [2] Chemistry. [3] Conservation of energy.
[4] Conservation of matter. [5] Isolate.

कहते हैं। हर एक परीक्ष्य एकाकी अपना भीतरी ढाँचा रखता है, उस ढाँचेको बनानेवाली ईंटोंका आपसका खास सम्बन्ध होता है। एकाकीके बाहरी जगत्से भी भिन्न-भिन्न सम्बन्ध हैं, क्योंकि वह बड़े जगत्का एक अभिन्न अवयव है। यह भीतरी ढाँचा और बाहरी परिस्थिति ऐसी चीजें हैं, जिनपर उस **एकाकी**का स्वरूप, सत्ता निर्भर हैं। साइंसीय **एकाकियों**का अध्ययन करते वक्त उनके इस पहलूपर भी हमारा ध्यान रहना ज़रूरी है।

§ २. भौतिक तत्त्व[1]

घड़ा मिट्टीसे बनता है। तरह-तरहके आभूषण सोनेसे बनते हैं। पिंड, घड़ा, ठीकरा किसी रूपमें भी हों, किन्तु मिट्टी उनमें अवश्य विद्यमान रहती है। आकार बदलनेपर भी जो पदार्थ उन सभी आकृतियोंमें मौजूद रहता है, उसे न्यायशास्त्रमें उपादानकारण[2] कहते हैं—जैसे मिट्टी और घड़े आदिको कार्य कहा जाता है। यह जगत्, उसके पहाड़, समुद्र, वृक्ष, पशु आदि लाखों चीजें किस तत्त्व या तत्त्वोंसे बनीं? इनके मूल उपादानकारण क्या हैं?—इस तरहके प्रश्नोंके साथ ही मनुष्यकी दार्शनिक जिज्ञासाका आरंभ होता है। उपनिषद्के ऋषियोंमें किसीने समझा कि पृथिवी (जो कि अधिकांश वस्तुओंका उपादानकारण है) जलसे पैदा होती है, जल आगसे, आग हवासे, किसी-किसीने जलको ही प्रथम माना, आकाशको किसी-किसीने आत्मासे पैदा हुआ माना, लेकिन इससे इस वक्त हमें प्रयोजन नहीं है, इन पाँचों तत्त्वोंको **महाभूत** या भूतका नाम दिया गया है। पुराने भारतीय भौतिकवादियों—चार्वाकों—ने आकाश-को बेकार समझकर छोड़ दिया, और पृथिवी, जल, तेज, वायु चार ही तत्त्वको माना। बुद्धने भी चार ही महाभूतोंको माना। पाँच महाभूतोंकी कल्पना भारतमें ईसासे पूर्व सातवीं या आठवीं सदीमें हुई। कह नहीं

---

[1] Elements.　　[2] Material cause.

[3] ऐतरेयारण्यक २।३।१–५

सकते आकाशको न माननेवाले उस वक्त भी मौजूद थे या नहीं। छठी सदी ई०पू०में चार भूतोंके माननेवाले मौजूद थे, इसमें तो सन्देह नहीं।

१. अनुसंधानका इतिहास

यूनानमें चार्वाक समकालीन थेल[१] (ई० पू० ६४०-५५०)ने पानी को मूल कारण माना। उसके शिष्य अनक्सिमन[२] (ई० पू० ५६०-५५०)ने वायुको, और हेराक्लितु[३] (ई० पू० ५३५-४२५)ने आगको मूलकारण सिद्ध किया, यद्यपि आगसे हेराक्लितुका अभिप्राय एक प्रकारकी सूक्ष्म आग—परमाणुरूप आग—से था।

ईसा-पूर्व सातवीं आठवीं शताब्दीसे ईसाकी सत्रहवीं शताब्दी—प्रायः ढाई हजार वर्ष—तक चार या पाँच महाभूतोंका बोलबाला था। **सांख्यने** प्रकृतिको उनका भी मूल समझा सही, किन्तु वह उपनिषद्के आत्माकी भाँति बहुत कुछ एक रहस्यमयी वस्तु थी। मध्यकालमें यूरोपमें भी हमारे यहाँकी भाँति कीमिया—लोहे या ताँबेसे सोना बनाने—की धूम थी। रसायनशास्त्रका आरंभ कीमियाके प्रयत्नसे हुआ। सबसे पहिले ब्वायल[४]ने "सन्देहवादी रसायनी" (१६६१ ई०) पुस्तक लिखकर थेलके ज़मानेसे चले आए भूतोंके मूलतत्त्व होनेमें सन्देह प्रकट करते हुए कहा कि मूलतत्त्व और ही हैं जिनके कि मिश्रणसे भूत बने हुए हैं। मूलतत्त्व उन्हींको कह सकते हैं, जो मिश्रित नहीं हैं। जब कोई द्रव्य भस्म की जाती है, तो उससे गन्धक निकलती है। अठारहवीं सदीके अन्तमें इसका नाम फ़्लोगिस्टोन्[५] पड़ा। चूंकि भस्म करनेपर धातुका वजन कुछ बढ़ जाता है, और वहाँ फ़्लोगिस्टोन्को निकलते देखा जाता था, इसलिए कल्पना की गई कि फ़्लोगिस्टोन्में ऋणात्मक भार है—चारमें दो ऋण मिले तो योग दो रह जाता है, किन्तु यदि उसमेंसे ऋण दो निकाल दिया जाये तो योग

---

[१] Thales. [२] Anaximenes. [३] Heraclitus. [४] Boyle.
[५] Flogistone.

चार रहेगा। उस समय वायुमें भार नहीं माना जाता था, ल्वायेलने[2] पहिले-पहिल दिखलाया कि उसमें भी भार है। वायुको मिश्रित नहीं माना जाता था, और उस वक्त इसीको गेस ख्याल किया जाता था। इसलिए जब कुछ और गेसें मिलीं, तो उन्हें भी वायुका ही भेद समझा जाने लगा।

रसायनिक तत्त्वोंमें कार्बन् द्वि-आक्सित[1] का पता सबसे पहिले ब्लैक (इंग्लैंड)ने १७५५ (पलासीके युद्धसे दो वर्ष पूर्व) लगाया, और उसका नाम उसने 'स्थिर वायु' रखा। आजके मूल रसायनिक तत्त्वोंमेंसे आक्सीजनकी खोज प्रीस्टलीने की, और यह भी दिखलाया कि आगके जलाने और प्राणधारीके श्वास लेनेके लिए भी इसकी आवश्यकता है। लेकिन प्रीस्टलीने अपने आविष्कारके महत्त्वको नहीं समझा, इसीलिए उसने उसका नाम 'प्रति-फ्लोगिस्टोनीकृत वायु' रखा। तो भी रसायनशास्त्रियोंका पैर अब ठोस जमीनपर लग चुका था। हेनरी कवेन्डिश्ने पानीपर हमला किया और उसे दो गेसों—आक्सीजन और हाइड्रोजनसे बना साबित किया। फ्लोगिस्टोन्का भूत अब भी सरसे हटा नहीं था, इसीलिए कवेन्डिश्ने उन दोनों गेसोंका नाम फ्लोगिस्टोन् और प्रति-फ्लोगिस्टोनीकृत वायु रखा। ऋणात्मक गुणवाले इस फ्लोगिस्टोन्के ख्यालने उस समयकी खोजोंमें बहुत बाधा डाली थी, क्योंकि धातुभस्मके वजन बढ़नेके अज्ञात कारणकी खोज करनेकी जगह यह रहस्यमय तत्त्व प्रश्नको ही दबा देता था।

अभी तक प्रयोग अधिकतर अटकलपच्चू चल रहे थे, इसलिए भी प्रगति तेजीके साथ नहीं हो रही थी। लेकिन अब नाप-तोलको प्रयोगका अंग बनाया गया। लावाजियेने निश्चित मात्रामें हवा रख एक पात्रमें निश्चित तौलमें पारा बन्दकर भस्म किया। पारेपर लाल जंग (मुर्चा) लग गया, और हवाको तोलनेपर वह कम उतरी। लाल जंगको फिर

[1] Carbon dioxide.　[2] Lavoisier.

तपानेपर पारा और एक गेस अलग हो गये। गेसको तोलनेपर उसका भार उतना ही निकला जितनी कि पात्रकी हवामें कमी थी। इस प्रकार सिद्ध हुआ कि कोई चीज वहाँसे न नष्ट हुई, और न बढ़ी। लावाजियेने देखा कि पहिले प्रयोगके बाद जो हवा बच रही थी, वह श्वासके योग्य न थी, लेकिन पाराके जंगसे निकली हवा श्वासके लिए उपयोगी थी। लावाजियेके इस प्रयोगने फ्लोगिस्टोन्‌के प्रेतसे रसायनशास्त्रका पिंड छुड़ाया।

आगेकी खोजोंसे पता लगा कि एक ही तत्त्व ठोस, तरल और वाष्प (=गेस) तीनों अवस्थाओंमें पाया जा सकता है। नई खोज जब आरम्भ हुई, उस वक्त यूनानी विद्वानोंकी कृतियाँ यूरोपमें श्रद्धाकी दृष्टिसे देखी जाने लगी थीं, और वह उनके लिए काफिरों और अन्-ईसाइयों की बात कहकर घृणा और अवहेलनाकी चीज न रह गई थीं। गलेलियो, न्यूटन, ब्वायल सभी देमोक्रितु[1] (ई० पू० ४६०-३७०)के परमाणुवादको इज्जतकी निगाहसे देखते थे; लेकिन अभी उसकी प्रयोगसे पुष्टि नहीं हुई थी। जान डाल्टन् (मानचेस्टर)ने पहिले-पहिल मूल और मिश्रित तत्त्वके अन्तरको साफ-साफ दिखलाया। उसने बतलाया कि मिश्रित तत्त्व वे हैं, जो एक या अनेक मूलतत्त्वसे मिलकर बने हैं; मूलतत्त्व अमिश्रित हैं। यह भी सिद्ध किया, कि भिन्न-भिन्न तत्त्वोंके परमाणु भारमें भिन्नता रखते हैं, और यदि तत्त्वोंको उतने ही परिमाणमें मिलाया जाये तो हमेशा एक सा ही मिश्रित तत्त्व बनेगा। उस समयके रसायनशास्त्री यूनानियोंकी भाँति परमाणुको छोटे-छोटे ठोस गोल कण मानते थे।

१९वीं सदीके आरम्भ तक मूल रासायनिक तत्त्वोंकी संख्या ३० तक पहुँच गई थी।

हाइड्रोजनके परमाणुओंको सबसे छोटा देखकर पहिले समझा गया था, कि यही सभी तत्त्वोंका मूल है; किन्तु जब तोल अधिक बारीकीसे

---

[1] Democritus.

की गई तो मालूम हुआ, कि हाइड्रोजन सबकी इकाई नहीं हो सकता।

उन्नीसवीं सदीके आरम्भमें जिन हथियारोंसे मूल रासायनिक तत्त्वोंका अन्वेषण हो रहा था, वह उतने बारीक न थे। पीछे उनकी बारीकी भी बढ़ी, और नये साधन भी हाथ आए। सितारोंकी दूरी, पिंड, परिमाण आदि नापनेमें जिस रश्मिवर्णदर्शक (स्पेक्ट्रास्कोप)ने बहुत सहायता की उसने रसायनकी पड़तालमें भी भारी सहायता की। प्रयोगसे मालूम हुआ, कि तप्त होनेपर धातु जिन रश्मियोंको छोड़ते हैं, उनके वर्णोंको बारीकीसे देखनेपर वहाँ भिन्न-भिन्न घनता और संख्यामें रेखागुच्छक पाये जाते हैं। पृथिवीपर मौजूद तत्त्वोंकी इन रश्मिवर्णीय रेखाओंकी सूची बना ली गई, और उनकी सहायतासे सूर्य और तारों तकके तत्त्वोंका पता लगाया जा सका। कितनी ही बार इन रेखागुच्छकोंसे सूर्य या तारोंमें एक तत्त्वका पता पहिले लगा, पीछे वह तत्त्व पृथिवीपर भी मिल गया। और कुछ तत्त्व तो वहाँ ऐसे हैं, जो पृथिवीमें मिल भी नहीं सके।

२. तत्त्वोंकी सूची

रासायनिक तत्त्वोंकी संख्या ९२ तक पहुँच गई है। इनमें कुछ तो जब प्रयोगमें देखे भी नहीं गए थे, तभी तालिकामें अपने रिक्त स्थानके कारण पहिलेसे बतला दिये गए थे और दो (८५,८७)की जगह अभी खाली है। नीचे रासायनिक तत्त्वोंकी तालिका दी जा रही है[1]—

नाम	परमाणु-भार	पिघालविंदु (सेंटी०)	उबालविंदु (सेंटी०)
१. हाइड्रोजन	१·००८	–२५९·१४	–२५२·७
२. हेलियम्	४·००३	–२७२·२	–२६८·९
३. लिथियम्	६·९४०	१८६	१२२०

[1] चिह्न (*)वाले तत्त्व रेडियो-क्रियावाले हैं।

नाम	परमाणु-भार	पिघालविंदु (सेंटी०)	उबालविंदु (सेंटी०)
४. बेरीलियम्	९·०२	१३५०	१५००
५. बोरोन्	१०·८२	२३००	२५५०
६. कार्बन	१२·०१०	7३५००	४२००
७. नाइट्रोजन	१४·००८	−२०९·८६	−१९५·८
८. ऑक्सिजन	१६·०००	−२१८·४	−१८३
९. फ्लुओरिन	१९·००	−२२३	−१८७
१०. न्योन्	२०·१८३	−२४८·६७	−२४५·१
११. सोडियम्	२२·९९७	९७·५	८८०
१२. मग्नेसियम्	२४·३२	६५१	११२०
१३. अलमोनियम्	२६·९७	६५९·७	१८००
१४. सिलिकोन्	२८·०६	१४२०	२६००
१५. फास्फोरस्	३०·९८	४४·१	२८०
१६. गन्धक	३२·०६	११२·८ ११९·०	४४४·६
१७. क्लोरिन्	३५·४५७	−१०१·६	−३४·६
१८. अर्गोन्	३९·९४४	−१८९·२	−१८५·७
१९. पोटास्	३९·०९६	६२·७	७६०
२०. कल्सियम्	४०·०८	८१०	११७०
२१. स्कॅडियम्	४५·१०	१२००	२४००
२२. टीटानियम्	४७·९०	१८००	7३०००
२३. वनाडियम्	५०·९५	१७१०	३०००
२४. क्रोमियम्	५२·०१	१६१५	२२००
२५. मंगानीस्	५४·९३	१२६०	१९००
२६. लोहा	५५·८४	१५३५	३०००
२७. कोबाल्ट	५८·९४	१४८०	३०००

नाम	परमाणुभार	पिघालविंदु (सेंटी०)	उवालविंदु (सेंटी०)
२८. निकल्	५८·६९	१४५५	२९००
२९. ताँवा	६३·५७	१०८३	२३००,7२९०००
३०. जस्ता	६५·३८	१९००	४३३·३
३१. गलियम्	६९·७२	२९·७५	7१६००
३२. जर्मानियम्	७२·६०	९३८·५	२७००
३३. संखिया	७४·९१	८१४	६१५
३४. सेलेनियम्	७८·९६	२२०	६८८
३५. ब्रोमिन्	७९·९१६	–७·२	५८·७८
३६. क्रिप्टोन्	८३·७	–१५७(-१६९)	–१५·९ (-१५१·८
३७. रुबीडियम्	८५·४८	३८·५	७००
३८. स्ट्रोन्टियम्	८७·६३	८००	११५०
३९. यित्रियम्	८८·९२	१४९०	२५००
४०. जिर्कोनियम्	९१·२२	१९००	7२९००
४१. न्युवयम्	९२·९१	१९५०	२९००
४२. मोलिब्देनम्	९५·९५	२६००	३७००
४३. मसूरियम्	..	..	..
४४. रुथेनियम्	१०१·७	२४५०	7२७००
४५. र्होडियम्	१०२·९१	१९८५	7२५००
४६. पल्लाडियम	१०६·७	१५५३	२२००
४७. चाँदी	१०७·८८०	९६०·५	१९५०
४८. कड्मियम्	११२·४१	३२०·९	७६७
४९. इंडियम्	११४·७६	१५५	१४५०
५०. टिन्[1]	११८·७०	२३१·८९	२२६०

[1] Tin.

नाम	परमाणु-भार	पिघालविंदु (सेंटी०)	उवालविंदु (सेंटी०)
५१. सुर्मा[१]	१२१·७६	६३०·५	१३८०
५२. तेलूरियम्	१२७·६१	४५२	१३९०
५३. आयोडिन्	१२६·९२	११३·५	१८४·३५
५४. क्सेनम्	१३०·३	–११२(-१४०)	–१०७·१(-१०९·१)
५५. सएसियम्	१३२·९१	२८·५	६७०
५६. वरियम्	१३७·३६	८५०	११४०
५७. लन्थानम्	१३८·९२	८२६	१८००
५८. सेरियम्	१४०·१३	६४०	१४००
५९. प्रसेओडिनियम्	१४०·९२	९४०	..
६०. न्योडिमियम्	१४४·२७	८४०	..
६१. इलिनियम्	..	..	..
६२. समरियम्	१५०·४३	7१३००	..
६३. युरोपियम्	१५२·०	..	..
६४. गडिनियम्	१५६·९	..	..
६५. टर्वियम्	१५९·२	..	..
६६. डिस्प्रोसियम्	१६२·४६	..	..
६७. होल्मियम्	१६३·५	..	..
६८. एर्वियम्	१६७·२	..	..
६९. थुलियम्	१६९·४	..	..
७०. उतेर्वियम्	१७३·०४	१८००	..
७१. लुतेसियम्	१७५·०	..	..
७२. हाफ्नियम्	१७८·६	१७००	7३२००
७३. तन्तालुम्	१८०·८८	२८५०	7४१००

[१] Antimony.

नाम	परमाणु-भार	पिघालविंदु (सेंटी०)	उबालविंदु (सेंटी०)
७४. तुङ्स्तेन्	१८३·९२	३३७०	५९००
७५. र्हेनियम्	१८६·३१	३०००	..
७६. ओसूमियम्	१९०·२	२७००	7५३००
७७. इरिडियम्	१९३·१	२३५०	४८००
७८. प्लाटिनम्	१९५·२३	१७७३·५	४३००
७९. सोना	१९७·२	१०६३	२०००
८०. पारा	२००६१	−३८·८७	३५६·९
८१. थलियम्	२०४·३९	३०३·५	१६५०
८२. सीसा	२०७·२१	३२७·४	१६२०
८३. विस्मथ्	२०९·००	२७१·३	१४५०
*८४. प्लोमियम्	..	..	..
८५. ..	..	..	..
*८६. रडोन	२२२·००	−११०	..
८७. ..	..	..	..
*८८. रेडियम्	२२६·०५	९६०	११४०
*८९. अक्टीनियम्	..	..	..
*९०. थोरियम्	२३२·१२	१८४५	7३०००
९१. प्रोटो-अक्टीनियम्	२३१	..	..
९२. उरानियम्	२३८·०७	7१८५०	..

मूलतत्त्व सभी एक आकारके नहीं हैं, यह ऊपरकी सूचीमें हाइड्रोजन (१·००८) और उरानियम् (२३८)के भारसे मालूम हो जायेगा।

पृथिवीकी ऊपरी ठोस पपड़ी ९९ सैकड़ा—आक्सीजन्, सिलिकोन्, अल्मोनियम्, लोहा, कल्सियम्, मग्नेसियम्, सोडियम् और पोटास्—इन

आठ तत्त्वोंसे मिलकर बनी है। ५० दुष्प्राप्य धातुएँ हैं, जो भूमिकी पपड़ी का $\frac{१}{१००००}$ हैं।

§ ३ परमाणु

परमाणुवाद यूनानकी देन है। भारतमें भी वैशेषिक (ईसवी २ सदी) का परमाणुवाद देमोक्रितु (ईसा पूर्व ४ सदी)के परमाणुवादसे लिया गया है, यह हम अन्यत्र[१] बतलाएँगे। परमाणुका पर्यायवाची यूनानी शब्द अ-तोमोन् है, जिसका अर्थ है अ-विभाज्य। वस्तुतः देमोक्रितु (ई० पू० ४६०-३७०)से ईसाकी १९वीं सदी तक भारत, यूरोप सभी जगह परमाणु अविभाज्य, अच्छेद्य माना जाता ही था। परमाणुकी सूक्ष्मताका अन्दाजा इसीसे लगाया जा सकता है, कि ५० शंख[२] परमाणुओंका वज़न आध छटाँक (२।। तोले)के करीब होगा। उसका व्यास एक इंचका दस करोड़वाँ हिस्सा है। सिग्रेट लपेटनेके पतले काग़ज़, अथवा पतंगी काग़ज़की मुटाईमें एकसे एकको सटाकर रखनेपर, एक लाख परमाणु आ जावेंगे। धूलिके एक छोटे कणमें दस पदुमसे अधिक होते हैं। सोडावाटरको गिलासमें डालनेपर जो छोटी-छोटी बूँदें निकल आती हैं, उनमेंसे एकके परमाणुओंको गिननेकेलिए संसारके तीन अरब आदमियोंको लगा दिया जावे, और बिना खाये-पीये-सोये लगातार प्रति मिनट तीन सौकी चालसे गिनते जावें, तो गिनती समाप्त करनेमें उन्हें चार महीने लगाने होंगे। पतले केशको उखाड़ते वक्त उसके सिरपर जो रुधिरकी सूक्ष्म बूँद लगी रहेगी, उसे अणुवीक्षणकी ताकतको इतना बढ़ाकर देखा जाये कि बूँद छै या सात फीट व्यासकी दीख पड़े, तो भी उसके भीतरके परमाणुका व्यास $\frac{१}{१०००}$ इंच ही हो सकेगा। अणुवीक्षण यंत्रमें इतना बड़ा करके दिखलानेकी ताकत है, तो भी जहाँ प्रकाशकी किरणें स्वयं परमाणुसे मोटी होंगी, वहाँ अपनेसे सूक्ष्म परमाणुको दिखलानेमें वह प्रकाश नहीं अंधकारका काम देंगी।

---

[१] "दर्शन-दिग्दर्शनन" पृष्ठ ६३९। [२] 50 million billion.

इतने सूक्ष्म परमाणुको नापना आसान काम नहीं है, तो भी इसके तरीके निकल आये हैं। सबसे अच्छा तरीका तेलका है। हर तरहकी धूल-मैलसे रहित खूब साफ जलपर तेल डालनेसे फैल जाता है; और पानीपर तेलका एक पतला फिल्म छा जाता है। कपूरके बारीक चूर्ण या दन्तमंजनमें इस्तेमाल होनेवाले तलकम् चूर्णको ऊपर छींटनेपर वह पानीके ऊपर चंचल, और तेलपर स्थिर हो जम जाता है। फिल्मकी यही मुटाई परमाणुकी मुटाई है। ऊपर परमाणुका जो परिमाण हम लिख आये हैं वह इसी तरहके फिल्मकी मुटाईको अणुमापक[1]के द्वारा नापकर मालूम हुई है। गैसोंके परमाणुओंकी नापसे परमाणुका परिणाम और बारीकीसे जाना जाता है।

अभी तक हम परमाणुको इस तरह वर्णन कर रहे थे; जैसे कि वह कण है, किन्तु प्रकाशकी भाँति परमाणु कण भी है और तरंग भी। काल जिसका अभिन्न अंग हो, उसमें यह विचित्रता होनी ही चाहिए। परमाणु निरन्तर डोलते रहते हैं, यह डोलना एक सीमाके भीतर होता है। जहाँ तक जाकर तरंगें फिर मुड़ आती हैं, उस दूरीको **तरंग-लम्बान**[2] कहते हैं। भिन्न-भिन्न जातिके परमाणुओंकी अपनी अलग-अलग तरंग-लम्बान होती है, जो कि परमाणुके भीतरी परिवर्तनके साथ बदल भी जाती है। यह लम्बान एक इंचके २५ करोड़वें हिस्से ($\frac{१}{२५}$ करोड़ इंच) से लेकर $\frac{१}{२५}$ इंच तक होती है। जिन ९२ भौतिक तत्त्वोंका ऊपर जिक्र कर आए हैं, वे अलग-अलग जातिके परमाणु हैं।

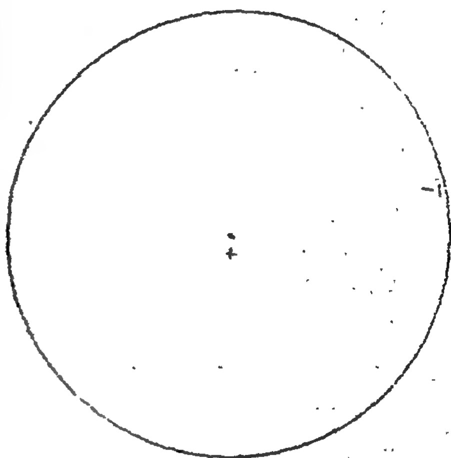
सारा विश्व परमाणुओंसे बना है। हमारी कायाका मकान इन्हीं ईंटोंसे चिना गया है, जो पूरियाँ और जलेबियाँ हम खाते हैं, वह भी इन्हीं परमाणुओंकी हैं। जो हवा या सुगन्ध हम साँस लेते या सूँघते हैं, वह भी इन्हीं परमाणुओंके हैं। यदि परमाणुके भीतर हम घुसें, तो मालूम होगा कि वहाँ पोली जगह ही ज्यादा है। भीतर चाहे कैसा भी हो, बाहर वह ठोस मालूम होता है।

---

[1] Micrometre. [2] Wave-length.

१. परमाणुका उदर

परमाणुके भीतर झाँकनेपर हम नाभिकण[1] और एलेक्ट्रन् (विद्युत्कण) को देखते हैं। सूचीमें दिये परमाणुओंकी छुटाई-बड़ाईके अनुसार एलेक्ट्रनोंकी संख्या और नाभिकणोंकी मात्रा अधिक होती है। नाभिकण केन्द्रमें रहता है। उसकी चारों ओर एलेक्ट्रन् परिक्रमा करते हैं। सबसे छोटा और सबसे सीधा-सादा ढाँचा हाइड्रोजन परमाणुका है (चित्र २२)। इसमें एक नाभिकण (प्रोटन्)के गिर्द एक एलेक्ट्रन् घूमता है। गोया परमाणु एक प्रकारका छोटासा सौरमंडल है। यही बाहरी



चित्र २२

(अनेक होनेपर सबसे बाहरवाला) एलेक्ट्रन् अपनी कक्षासे परमाणुके आकारकी सीमा बनाता है, और साथ ही अपनी ऋणात्मक बिजलीसे नवागन्तुकको बाहरकी ओर धक्का देते पहरेदारका भी काम करता है। परमाणु भीतरसे कितना पोला है, इसका अन्दाज इसीसे लग सकता है, कि हाइड्रोजनके नाभिकण (=प्रोटन्)को यदि आँवलेके बराबर बड़ा कर दिया जावे, तो उसके और एलेक्ट्रन्के बीचकी खाली जगह दो हजार फुट चौड़ी होगी। जहाँ सवातीन फर्लांगसे अधिक व्यासके वृत्तवाले मैदानमें एक आँवला (नाभिकण) और उससे भी दो हजार हिस्सा छोटा एक कण (एलेक्ट्रन्) पड़ा हो, उस मैदानको हम बहुत कुछ खाली जगह ही कह

---

[1] Nucleus.

सकते हैं। यह है हमारा हाइड्रोजन परमाणु। एक और वड़े परमाणुको लीजिए। चाँदीके परमाणुमें १०७ एलेक्ट्रन्[1] होते हैं। यदि उसके नाभिकणको अंटाघरके गेंदके बराबर वढ़ा दिया जाये तो सबसे नजदीकके एलेक्ट्रन्की कक्षा अंटाघरकी दीवारें होंगी, और सबसे दूरवालेकी कक्षा आध मीलपर।

२. एलेक्ट्रन्[1]

सबसे छोटे परमाणु हाइड्रोजनमें एक, और सबसे बड़े उरानियम्में दो सौ एलेक्ट्रन् होते हैं। आँवले और कणके दृष्टान्तसे मालूम हो गया होगा, कि परमाणुका अधिकांश भाग नाभिकणका बना है, एलेक्ट्रन् हाइड्रोजनके नाभिकण (प्रोटन्)का सिर्फ $\frac{१}{२०००}$ है। उरानियम् हाइड्रोजनसे २३८ गुना बड़ा है। नाभिकण धनात्मक बिजलीका पुंज है। उसमें यह बिजली इतनी मात्रामें है, कि एलेक्ट्रन्की ऋणात्मक बिजलीकी आकर्षण शक्तिको विफल बना देती है। बड़े परमाणुओंके नाभिकण अनेक प्रोटनों और एलेक्ट्रनोंसे बने होते हैं—चाँदीके नाभिकणमें १०७ प्रोटन् और उतने ही एलेक्ट्रन् होते हैं। अनेक एलेक्ट्रन् होनेपर वे नाभिकणसे दूर अकेले दो या अधिककी टोलीमें घूमते हैं, यह हम आगे बतलायेंगे।

सारे परमाणुसे तुलना करनेपर प्रोटन् भी नगण्यसा है, फिर उससे भी २०००वाँ हिस्सा छोटे एलेक्ट्रन्के आकारकी गिनती ही क्या हो सकती है?

(१) एलेक्ट्रन्का आविष्कार

१८११ ई० तक अणु सबसे सूक्ष्म तत्त्व समझा जाता था, इसी साल अवोगद्राने अणुसे परमाणुको अलग किया। ८६ साल तक परमाणु सबसे सूक्ष्म अवयव रहा। फिर १८९७ ई०में सर जे० जे० टाम्सनने परमाणुके अन्वेषणके समय एक टुकड़ा पाया, जो कि सबसे छोटे हाइड्रोजन परमाणुसे भी छोटा था, नापनेपर वह उसके $\frac{१}{२०००}$ के करीब सिर्फ ऋणात्मक

---

[1] Electron.

बिजलीका निकला। यही है एलेक्ट्रन बिजली की सबसे छोटी इकाई। आगेकी खोजोंसे यह भी मालूम हुआ, कि बिजली जहाँ कहीं भी मिलती है, वह इसी इकाईकी मात्राके अनुसार अर्थात्, १, २, ३.....एलेक्ट्रन-के बराबर मिलती है; $\frac{१}{४}$ $\frac{१}{२}$. १$\frac{१}{२}$....,की मात्रामें नहीं। टाम्सनके शिष्य रदरफोर्डने परमाणुके भीतरी ढाँचेके बारेमें बहुत महत्त्वपूर्ण खोजें की हैं, और भौतिकशास्त्रमें उसकी गवेषणाएँ डार्विनके विकासवादके समान महत्त्व रखती हैं।

(२) साइक्लोट्रोन्[1]

पिछले बीस सालोंमें जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण खोजें हुई हैं, उसमें कलीफोर्निया विश्वविद्यालयके प्रोफेसर अर्नेस्ट लारेंस द्वारा आविष्कृत साइक्लोट्रोन् अत्यन्त सहायक साबित हुआ। परमाणु ठोस न होते भी भीतरी एलेक्ट्रनों और नाभिकणोंके आकर्षण-विकर्षणके कारण बहुत कठोर हैं। एलेक्ट्रनोंका पहरा चारों तरफ इतना जबर्दस्त है, कि किसीका इस क़िलेके भीतर घुसना बहुत कठिन है। इन प्रहरियोंको हटाये बिना भीतर घुसा नहीं जा सकता था, और न बिना क़िलेबन्दीको हटाये इन प्रहरियोंकी ही अच्छी तरह जाँच-पड़ताल हो सकती थी। साइक्लोट्रोन् एक बड़ी शक्तिशाली तोप जैसा है, जिसके जरिये, बड़े वेग और ज़ोरके साथ परमाणुका गोला फेंका जा सकता है। इसकेलिए एक विशाल चुम्बकके दोनों ध्रुवोंके बीच एक कोठा होता है। इसी कोठेमें अपने वृत्तको लगातार बढ़ाते हुए परमाणु चक्कर काटते ऋणसे धन और धनसे ऋण ध्रुवकी ओर दौड़ते हैं। अन्तमें एक सूक्ष्म छिद्रसे, लक्ष्यपर वह गोलेकी तरह चलाये जाते हैं, जिससे लक्ष्यके परमाणु टूट जाते हैं। जिस वक्त ये 'गोलियाँ' साइक्लोट्रोन्से निकलती हैं, तो उनका रूप एक स्थिर प्रकाश रेखासा होता है, और वह एक लाख मील प्रति सेकंडकी चालसे चलती है। इस रूपमें

---

[1] Cyclotron देखो फ़ोटो-चित्र १०

उनकी शक्ति इतनी अधिक होती है, जिसपर कि मनुष्य आजसे पहिले क़ाबू नहीं पा सका था।

आजकल दुनियाका सबसे भारी साइक्लोट्रन् बर्कले विश्वविद्यालय (कलीफोर्निया) में बन रहा है। इसके केवल चुम्बक-पिंडमें ४००० टन (१,१२,००० मन) ताँबा और फ़ौलाद लगेगा, और वह ऐसी किरण उत्पन्न करेगा, जो कि १० करोड़से ३० करोड़ वोल्ट शक्ति रखेगी। वर्त्तमान साइक्लोट्रोनोंमें सबसे भारी किरण हवामें ५ फ़ीट तक घुस सकती है, नये साइक्लोट्रन्की किरण १४० फ़ीट तक घुस सकेगी।

साइक्लोट्रन्की गवेषणाएँ सिर्फ़ सिद्धान्त बनाने ही के काम नहीं आई हैं। इसकी सहायतासे ऐसे रेडियो-क्रियावाले पदार्थ बनाये गये हैं, जिनका चिकित्सा-शास्त्र और दूसरे कामोंमें बहुत उपयोग हो रहा है। इससे निकली किरणें एक्स-रे गामा-रेके तौरपर इस्तेमाल होती हैं। और प्राणिके शरीरके भीतरकी अवस्थाके जानने तथा चिकित्सामें काम आती हैं। भिन्न-भिन्न प्रकारके मिश्रण और घनता रखनेवाली किरणोंकी क्रियाओंको जाननेमें अभी वर्षों लगेंगे, किन्तु अभी भी प्रयोगसे मालूम हुआ है, कि न्यूट्रन् (प्रोटन्से भी नीचेका कण, जिसमें न ऋणात्मक ही बिजली है न धनात्मक ही) की किरणें सजीव ज्ञानतन्तुओंमें घुसकर इतने ज़ोरके साथ प्रसर सकती हैं कि उनकी सहायतासे इच्छानुसार ज्ञानतन्तुके रुग्ण सेलको मारा जा सकता है।

आजकलके भारी ताक़तवाले साइक्लोट्रोन् इतनी ताक़तके साथ कणकों फेंक सकते हैं, जिससे परमाणुके बाहरी तथा कम मज़बूतीसे बँधे अवयवोंको गिराया जा सकता है। बर्कले विश्वविद्यालयके महान् साइक्लोट्रोन्के तैयार हो जानेपर हम परमाणुके सबसे कठोर और रहस्यमय अंश नाभि-कणको तोड़कर उसकी पड़ताल कर सकेंगे। पिछले चालीस वर्षोंमें भौतिकशास्त्र बहुत आगे बढ़ा है, इसमें सन्देह नहीं; किन्तु नाभिकणने अभी अपने कितने ही रहस्योंको छिपा रखा है, जिनको खोल बाहर करना आजकल भौतिकशास्त्रियोंकेलिए बहुत ज़रूरी हो गया है।

नाभिकण रास्ता न देनेकेलिए जिस तरह भीष्म प्रतिज्ञा कर चुका है, साइंस भी रहस्यके ढूंढ़ निकालनेकेलिए वैसे ही प्रतिज्ञा-बद्ध है।

अभी हम बतलानेवाले हैं, कि परमाणुकी प्रायः सारी शक्ति उसके नाभिकणमें निहित है। नाभिकण ही परमाणुकी विशेषताका कारण है, अर्थात् सारे भौतिक तत्त्वोंकी कुंजी यहीं छिपी हुई है। यह भी अन्दाजा लगाया जाता है, कि नाभिकणोंको बांधनेवाली शक्ति एक और भी सूक्ष्म कण **मेसोट्रन्**[1]के बारेमें और अधिक जानकारी प्राप्त करनेका अर्थ है, साइंसकी सीमाको और आगे बढ़ाना।

(३) एलेक्ट्रन् तरंग भी कण भी

(क) कण—एलेक्ट्रनका जब पहिले-पहिल पता लगा, तो इस बातका काफ़ी प्रमाण था, कि वह कण है। चुम्बक और बिजली फैले क्षेत्रके प्रभाव द्वारा टाम्सनने एलेक्ट्रन्को हटनेपर मजबूर किया। इस हटनेके परिणामसे उसने एलेक्ट्रन्के भारको भी तोला; जिससे मालूम हुआ, कि नलीमें चाहे कोई भी गैस हो, हटनेवाले कणका वज़न एकसा रहता है। इस प्रकार जब एलेक्ट्रन्का भार और स्थान मालूम हो गया, तो उसे कण छोड़ और कहा ही क्या जा सकता था?

एलेक्ट्रन्के कण होनेका और भी सबूत है। यदि हम सीसेका पत्ता लेकर चूर्ण कर लें और उसे गन्धकमिश्रित जस्तेके स्फटिकके चूरेमें अच्छी तरह मिलाकर पर्दासा बना उसपर एलेक्ट्रन्से गोलेबारी करें, तो पर्देके ऊपर सब जगह अनियमित रीतिसे चिनगारियाँ निकलती दिखलाई देती हैं। पर्देसे टकराकर प्रत्येक एलेक्ट्रन् एक हलकीसी चिनगारी पैदा करता है, जिसे वृहत्प्रदर्शक शीशेकी मददसे देखा जा सकता है। मालूम होता है, वर्षाकी धारकी भाँति पर्देपर गिरती एलेक्ट्रनोंकी धार बुलबुलेकी जगह छोटी-छोटी चिनगारियोंको उत्पन्न कर रही है। अथवा उसकी इस वक्तके

---

[1] Mesotron.

व्यवहारकी उपमा मशीनगनकी गोलियोंकी बौछारसे लोहेके चदरेपर टकराकर उछलती चिपटी गोलियोंसे दी जा सकती है।

(ख) तरंग—२८ वर्षों तक एलेक्ट्रन्को कण मानते हुए अनुसन्धान करनेमें कोई दिक्क़त नहीं पेश आई; किन्तु १९२५से वैसा माननेमें कठिनाइयाँ उत्पन्न होने लगीं। एक एलेक्ट्रन् अपनी कक्षा छोड़ दूसरे एलेक्ट्रन्की कक्षाको पारकर (X) निकल जाता है, उस समय एलेक्ट्रन्के कक्षाओंके पार करनेकी शकल अंग्रेज़ी एक्स(X) अक्षरसी होनेसे, जो किरण उत्पन्न होती है, उसे एक्स-किरण या एक्स(X)-रे कहते हैं। पहिले-पहिल एक्स-रेका जब पता लगा, तो सन्देह हो रहा था कि वह कण है या तरंग। किन्तु पतले फिल्मसे पार कराकर देखा गया, तो मालूम हुआ कि उसका रूप कणसा नहीं तरंगसा है। एलेक्ट्रन्के एक्स-रेको इतना वेध नहीं सकते, इसीलिए उसकी परीक्षाकेलिए टाम्सनको बड़ा तरद्दुद उठाना पड़ा। टाम्सनने सोनेका फिल्म बनाया सभी धातुओंकी भाँति सोना भी अत्यन्त सूक्ष्म स्फटिकोंसे बना है। इन्हीं सूक्ष्म स्फटिकोंके उचित तापमानमें पाँतीसे जुड़ने या इकट्ठा हो जानेसे सोनेका पत्र या सिल्ली बनती है। टाम्सनने एलेक्ट्रनोंके स्वरूपकी परीक्षाकेलिए सोनेके स्फटिकोंकी पत्ती या पन्नी बनाई, और पन्नी भी एक इंचके दस लाखवें हिस्सेके बराबर पतली। इतनी पतली पन्नी अपने निर्माता स्फटिकोंकी भाँति पारदर्शक फिल्म जैसी होती है, और उससे आर-पारकी चीज़ें देखी जा सकती हैं। एलेक्ट्रन्को सोनेके फिल्मसे पार कराया गया, और फोटो ले प्लेटपर उसके भावको देखा गया (फोटो-चित्र ११)। वहाँ धूप-छाया जैसी सफ़ेद और मैली रेखाएँ दिखलाई पड़ीं। समुद्र या जलाशयकी तरंगोंको हम देखते हैं, कि कैसे अगली तरंगके निचले भागको पीछेसे आनेवाली तरंगका ऊँचा उठा किनारा पकड़ता है, और दोनों एक दूसरेको मिटा देती हैं। यह जगह तरंगमें मैली छायासी मालूम होती है। तरंगका चमकीला किनारा इसलिए दिखलाई पड़ता है, कि वहाँ आगे-पीछेवाली दोनों ही तरंगोंका उठा भाग मिलकर तरंगको और ऊँचा करता

है। फोटोके प्लेटकी यह धूप-छाँही रेखाएँ सिर्फ़ उनके तरंग-रूप होने ही से हो सकती हैं। पहिले शीशेके पर्देवाले प्रयोगमें हमें अनियमित चिनगारियाँ दिखलाई पड़ी थीं, किन्तु यहाँ नियमित काली-चमकीली रेखाएँ। इस प्रयोगने एलेक्ट्रन्को तरंग सिद्ध कर दिया। प्रयोगसे यह भी मालूम हुआ, कि एलेक्ट्रन्की तरंगें एक्स-रेकी तरंगोंसे छोटी हैं। एलेक्ट्रन्वाली तरंगोंमें कुछ निजी विशेषताएँ हैं। इन तरंगोंकी गति एकरस या शान्तसी नहीं मालूम होती, और इनके कोई-कोई भाग अशान्तसे मालूम होते हैं, इसीलिए वे दूसरे भागोंकी अपेक्षा सुस्त चालसे आगे बढ़ते हैं। तूफ़ानके वक़्त समुद्रमें भी ऐसी तरंगें हमें दिखलाई पड़ती हैं। तेज़ तरंगें आगे बढ़कर इन अनिश्चितसी सुस्त तरंगोंको पार कर जाती हैं। लेकिन साथ ही हम यह नहीं कह सकते, कि यह अशान्त भाग एलेक्ट्रन्-तरंग-कणका स्थान है, क्योंकि ये अशान्त भाग फैलते रहते हैं। यदि यह फैलाव एलेक्ट्रन्का स्वरूप होता, तो अब तक उसे असीम तक फैल जाना चाहिए। इसके बारेमें हम इतना ही कह सकते हैं, कि चाहे जैसे भी हो एलेक्ट्रन्-तरंग-कण इससे सम्बद्ध है।

इस प्रकार एलेक्ट्रन् तरंग और कण दोनों तरहकी प्रवृत्ति रखता है। इसीलिए यहाँ उसकेलिए एलेक्ट्रन्-तरंग-कण कहा गया है।

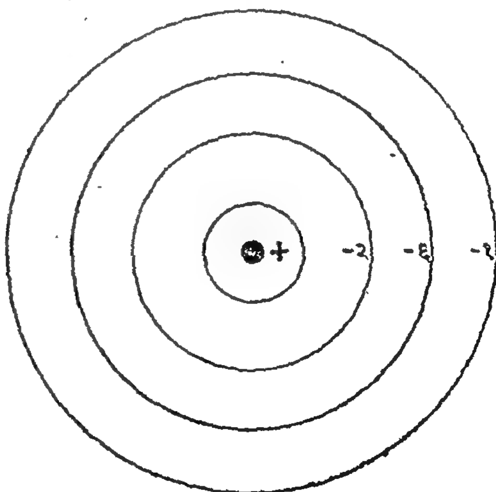
(४) गति

जब किसी पदार्थपर प्रकाश डाला जाता है, तो उससे एलेक्ट्रन्-तरंग-कण निकलते हैं। उनकी चालको हम नाप सकते हैं। उससे मालूम होता है कि प्रकाशकी तेज़ी-मन्दीका एलेक्ट्रन्की गतिपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। एक तेज़ और घना प्रकाश, निकलनेवाले एलेक्ट्रनोंकी संख्याको बढ़ा सकता है, किन्तु वह उनकी गतिको तेज़ नहीं कर सकता। हाँ, यदि बड़े तरंगवाले प्रकाशकी जगह छोटे तरंगवाले प्रकाश (उदाहरणार्थ लालकी जगह नीले या कासनी प्रकाश) को इस्तेमाल करें, तो एलेक्ट्रन्-तरंग-कणोंकी गति तेज़ हो जाती है, चाहे प्रकाश कितना ही क्षीण क्यों न हो। एक्स-रे

एलेक्ट्रन्-तरंग-कणकी अपेक्षा छोटी तरंगोंवाली होती है, इसीलिए उसे डालनेपर एलेक्ट्रन्-तरंग-कण बहुत ही जबर्दस्त वेगसे निकलते हैं। एलेक्ट्रन्-तरंग-कणोंकी चालें प्रकाशगतिका ६६८ या १,८२,६२८ मील प्रतिसेकंड तक हो सकती है। लेकिन एलेक्ट्रन्-तरंग-कणसे अधिक भार रखनेवाले कणोंकी गति अपने भारके अनुसार कम हो जाती है। हेलियम्का नाभि-कण एलेक्ट्रन्-तरंग-कणसे ७४०० गुना बड़ा है और चार प्रोटन् और दो एलेक्ट्रनोंसे बना होता है; इसीलिए उसकी चाल १० हज़ार मील प्रति सेकंड रह जाती है; यद्यपि मात्राकी अधिकतासे दूसरी ओर उसका प्रहार करनेका बल बहुत ही ज्यादा होता है।

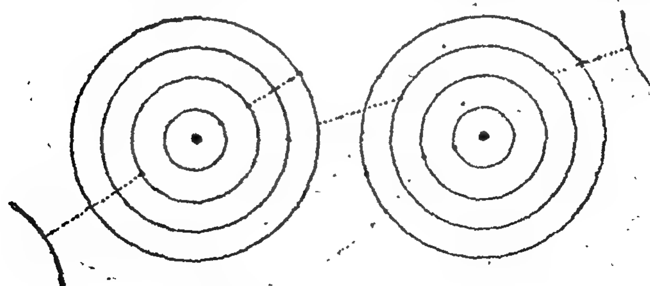
(५) कक्षा

एलेक्ट्रन्की कक्षा और उसपर उसकी गतिके बारेमें कुछ और कहनेकी आवश्यकता है। हम कह चुके हैं कि हाइड्रोजन परमाणुमें सिर्फ़ एक नाभि-कण—जो कि यहाँ एक प्रोटन्—है, जिसके गिर्द एक अकेला एलेक्ट्रन् घूमता है। किन्तु दूसरे परमाणु एकसे अधिक एलेक्ट्रनोंवाले होते हैं। उदाहरणार्थ सोडियम्को ले लीजिए, इसमें एक नाभि-कण और १२ एलेक्ट्रन् होते हैं। ये एलेक्ट्रन् तीन टोलियोंमें अलग-अलग कक्षाओंपर घूमते हैं। इनमें कुछ एलेक्ट्रनोंकी टोलीके पथ नाभि-कणके नज़दीक पड़ते हैं, दूसरी टोलीके



चित्र २३ (सोडियम्)

पथ कुछ और दूर, अन्तमें हम बाहरी एलेक्ट्रन् (या एलेक्ट्रनों) के पथ (=कक्षा)पर पहुँचते हैं (चित्र २४)। एलेक्ट्रनोंकी यह कक्षायें निश्चित हैं। जैसे रेल पटरी हीपर चल सकती है, वैसे ही एलेक्ट्रन् कक्षापर ही घूम सकता है, कक्षाके बीचवाली जगहमें नहीं घूम सकता। कक्षाके खाली होनेपर वह नाभि-कणके पासवाली पहिली कक्षापर जा सकता है, किन्तु उससे आगे नहीं बढ़ सकता। जब हम बाहरी एलेक्ट्रन्पर प्रहार करते हैं, तो या तो वह उसे सह लेता है, या अपनी कक्षाको छोड़ बाहर काफ़ी दूर किसी दूसरे परमाणुवाले एलेक्ट्रन्की कक्षापर जाकर घूमने लगता है, यदि वह खाली रही। हम अपनी इच्छानुसार एलेक्ट्रन को जिस किसी कक्षापर नहीं डाल सकते, हाँ गणित द्वारा जान सकते हैं, कि वह किन कक्षाओंमें जा सकता है। अब भागे एलेक्ट्रन्की पहिली कक्षा खाली रह गई। फिर प्रहार करनेपर दूसरा एलेक्ट्रन् अपनी कक्षाको छोड़ता है, किन्तु पासकी कक्षाएँ एलेक्ट्रन् सहित हैं, इसलिए वह उनपर न जा, कूदकर उस खाली कक्षापर पहुँच जाता है। एलेक्ट्रन्-सहित होनेसे यह बीचवाली कक्षा सजीवसी होती है, और उसके पार करनेमें एलेक्ट्रन् तथा उक्त कक्षाकी टक्करसी लगती है। कक्षा और भागते एलेक्ट्रन्का पथ एक दूसरेको काटते हुए चौरस्ता या अंग्रेजीके एक्स (X) अक्षर जैसा आकार बनाते हैं, इसलिए दोनोंके बहुत ही तीव्र और शक्ति-



चित्र २४ (एक्स्-किरण)

शाली घर्षणसे जो किरण पैदा होती हैं, उसे एक्स-किरण या एक्स-रे कहते हैं (चित्र ५५, पृ० १३६में ऐसी ५ एक्स-रे हैं)। इस तरह खाली कक्षाओंको पकड़नेकेलिए एलेक्ट्रनोंको जितनी वार 'सजीव' कक्षाओंको पार करना होता है, उतनी एक्स-रे पैदा होती हैं। यह कार्रवाई तबतक जारी रहती है, जब तक कि परमाणु अपने खोए एलेक्ट्रनोंकी रिक्त कक्षाओंको भर नहीं लेता। इस बीचके समयमें उसका व्यवहार कुछ-कुछ प्रोटन् (धनात्मक बिजली जो कि अपनी ओर आकर्षण करनेकी शक्ति रहती है) जैसा होता है।

३. नाभिकण[१]

परमाणुका हीर, नाभिकण मात्रामें परमाणुका प्रायः सम्पूर्ण भार है। वस्तुतः परमाणुके भीतर यह एक और छोटासा अणु है, जो हाइड्रोजन-भिन्न परमाणुओंमें अनेक प्रोटनों तथा कितने ही एलेक्ट्रनोंके जोड़से बना है। ये प्रोटन् उसी तरह आपसमें बँधे हैं, जैसे अणुके भीतर परमाणु और परमाणुके भीतर एलेक्ट्रन् और नाभिकण। बल्कि यह कहना चाहिए, कि प्रोटनोंको बाँधनेवाली नाभिकणके भीतर छिपी शक्ति इतनी जबर्दस्त है, कि पहिली शक्तियोंसे उसकी तुलना ही नहीं की जा सकती। नाभिकणके फूटनेपर जो शक्ति उससे निकलती है, वह आक्सीजन और हाइड्रोजनकी सम्मिलित शक्तिसे ६० लाख गुना ज्यादा होती है। नाभि-कणके परिवर्तनसे तत्त्वमें परिवर्तन हो सकता है यह हम आगे बतलाएँगे। यदि एक राईभर सीसेको इस प्रकार सोनेमें परिवर्तित किया जा सके, तो ऐसा करनेसे नाभिकणके-भीतरसे जो बन्द शक्ति निकलेगी, वह २८ मन कोयलेसे मिलनेवाली शक्ति (अपनेसे दस करोड़ गुना) के बराबर होगी। वह नया बना राईभरसे कमका सोना उतना मूल्यवान् नहीं साबित होगा, जितनी कि यह मुक्त हुई शक्ति।

यदि हम हाइड्रोजनको हेलियम्के परमाणुमें परिणत कर सकें, जिसकेलिए हाइड्रोजनके चार प्रोटनोंको दो एलेक्ट्रनोंसे बाँध हेलियम्के

---

[१] Nucleus.

नाभिकणके बराबरका बनाना होगा तो ऐसा करनेसे हम एक तत्त्वको दूसरेमें परिवर्तित ही नहीं कर देंगे, बल्कि इससे हमें ७ घंटे तक चलती रहनेवाली दस लाख घोड़ेकी ताक़त मिलेगी। प्रोटन् और एलेक्ट्रन् एक दूसरेसे फ़ासिलेपर रहते हैं। यदि दोनों जोड़ दिये जायें, तो बिजलीकी एक भारी चमक फैलाकर वे लुप्त हो जायेंगे। किन्तु उससे जो शक्ति मिलेगी, वह अकूत होगी—एक चुटकीभर मिट्टीके नाभिकणोंसे निकली ताक़त एक बड़े जहाज़को यूरोपसे अमेरिका पहुँचा सकती है। वस्तुतः नाभिकणोंके भीतर बन्द अपार शक्तिको मुक्तकर यदि हम अपने अधिकारमें कर सकें, तो हम कलों-कारखानोंको चलानेकेलिए कोयला, तेल, जलप्रपातकी बिजलीकी परतंत्रतासे मुक्त हो जावेंगे। लेकिन अभी हम इस दिशामें आगे नहीं बढ़ सकेंगे। इस ख्यालको मनका लड्डू ही समझना चाहिए।

सबसे छोटा नाभिकण हाइड्रोजन है। यद्यपि मात्रामें वह एलेक्ट्रन्से दो हज़ार गुना बड़ा है, किन्तु आकारमें उससे छोटा, $\frac{1}{2}$ नील इंच मात्र। हाइड्रोजनमें प्रोटन् और एलेक्ट्रन् दूर-दूर रहते हैं, किन्तु हेलियम् आदि दूसरे तत्त्वोंमें वे मिलकर नाभिकणको बनाते हैं, कैसे ?—यह अभी अज्ञात है। हाइड्रोजनका नाभिकण प्रोटन् कहा जाता है, यह बतला चुके, किन्तु प्रोटन् कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं रखता, वह वस्तुतः न्युट्रन् और पाज़ीट्रन्का योग है। इस प्रकार विश्वके मूल परमाणुके भी मूलमें जानेपर वह एलेक्ट्रन्, पाज़ीट्रन् न्युट्रन्का योग है।

§ ४. नाभिकण टूटनेसे निकले कुछ कण, तरंग

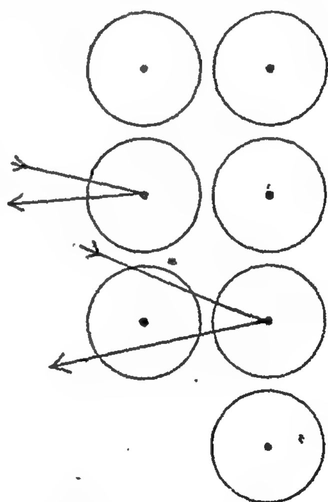
परमाणुकी भारी कक्षापर घूमनेवाले एलेक्ट्रनोंकी संख्या उनके कुछ विशेष गुणोंको बतलाती है। बाहरी कक्षापर १, ४ एलेक्ट्रन् रखनेवाले परमाणु, गुच्छक बनानेमें बहुत तत्पर देखे जाते हैं। २६, २७, २८ एलेक्ट्रन् रखनेवाले परमाणु रेडियो-क्रियावाले होते हैं, अर्थात् उनसे किरणें फूटकर निकला करती हैं। किरणें शरीरावयवका रूप हैं, इसलिए तत्त्वमें भी परिवर्तन होता है। रेडियम् एक रेडियो-क्रियावाली धातु है।

उसका नाभिकण जब टूटता है, तो उससे तीन प्रकारके कण या किरणें निकलती हैं, जिन्हें यूनानीके आरम्भिक अक्षरोंके अनुसार **अल्फा-कण**, **बीटा-कण**, और **गामा-किरण** कहते हैं।

१. अल्फा-कण[1]

अल्फा-कण ४ प्रोटनों और दो एलेक्ट्रनोंका एक स्वतन्त्र परमाणुसा है। हाइड्रोजन्के बादवाले तत्त्व हेलियम्के प्रोटनों और एलेक्ट्रनोंकी भी यही संख्या है। एलेक्ट्रन् और प्रोटन्की बिजलियाँ एक दूसरेकी विरोधी हैं, इसलिए खास दूरीपर रहकर वह एक दूसरेपर नियमन रखती हैं। यदि उक्त चारों प्रोटन् और दोनों एलेक्ट्रन् जुड़ जायें तो अल्फा-कण नष्ट हो जाएगा और उसकी जगह प्रोटन् आ मौजूद होगा, जिसकी कि मात्रा ठीक हेलियम्के बराबर होगी।

अल्फा-कण रेडियम्से निकल १०से १५ हजार मील प्रतिसेकंडकी चालसे चलता है। वह बहुत शक्तिशाली होता है, यह बतला आये हैं। परमाणुके भीतरकी हालतका पता लगानेकेलिए रदरफोर्डने इसे तोपका गोला बनाया था। अल्मोनियम्में वह एलेक्ट्रन्की कक्षाको पार कर गया, किन्तु ठोस नाभिकणके प्रतिघातसे उसे लौटकर पीछे हटना पड़ा (चित्र २२)। नाभिकणके आकारके नापनेमें, इस प्रत्याघातसे लौटे अल्फा-कणका पर्देपर प्रतिफलन बहुत सहायक सिद्ध हुआ है। अल्फा-कणका तापमान अत्यन्त अधिक है। यदि वह काफ़ी संख्यामें एकत्रित किया जा सके, तो



चित्र २५

[1] α-Particle.

तापमान ५० अरब सेंटीग्रेड होगा। इसके सामने सूर्यके केन्द्रका ४ करोड़ डिग्री तापमान कुछ नहीं है। अँधेरेमें दिखाई देनेवाली रेडियम्वाली घड़ीमें कुछ कण इसी तापमानके हैं, किन्तु उनकी संख्या इतनी कम है, कि वह हमें कुछ नुकसान नहीं पहुँचा सकते।

२. बीटा-कण

रेडियम्के टूटनेपर दूसरी किरण बीटा-कण है, यह मामूली एलेक्ट्रन् है।

३. गामा-किरण

तीसरी चीज़ रेडियम् नाभिकणके टूटनेपर जो निकलती है, वह है गामा-किरण। यह कण नहीं, बल्कि एक बहुत सूक्ष्म तरंगोंवाली एक्स-रे है। एक्स-रेकी तरंगें इंचका १ करोड़वाँ भाग होती हैं, और गामा-किरण १० खर्बवाँ भाग।

§ ५. न्युट्रन्, पोज़ीट्रन्

१. न्युट्रन्—१९११ ई० तक रदरफोर्ड परमाणुके भीतरी ढाँचे—नाभिकण और एलेक्ट्रन—को रेडियो-क्रिया द्वारा व्यक्त करानेमें सफल हो चुका था।

१९१९ ई० तक जिस तरहके धन-ऋण-बिजलीवाले नाभिकण, एलेक्ट्रन् मालूम थे, उनके बारेमें रदरफोर्डको सन्देह हुआ, कि इस तरहके कण पृथिवी, तारे आदिके मूल उपादान नहीं हो सकते। वह सोचने लगा—मूल उपादान तत्त्व ऐसा होना चाहिए जो धन, ऋण दोनों प्रकारकी बिजलियोंसे मुक्त हो। १९२० ई०में उसने न्युट्रन्के अस्तित्वके बारेमें भविष्यद्वाणी ही नहीं की, बल्कि उसकी विशेषताओंका विवरण भी बतलाया। १० वर्ष बाद १९३२ ई०में रदरफोर्डके सहकारी चड्विकने न्युट्रन्को खोज निकाला।

रदरफोर्डने यह बतलाया था, कि धन बिजलीसे व्याप्त होनेसे प्रोटन् द्वारा प्रहार करनेपर नाभिकण रोकनेकेलिए बहुत जोर लगाता है, खासकर उरानियम् जैसे तत्त्वके बहुत बड़े नाभिकणके भीतर प्रहार करना

तो बहुत ही मुश्किल है, किन्तु न्युट्रन् दोनों तरहकी बिजलियोंसे रहित होनेसे आसानीसे भीतर घुस सकता है। १९३४ ई०में इतालियन साइंसवेत्ता फेर्मीने कई परमाणुओंका एक दूसरेमें परिवर्तन किया। न्युट्रन् अपनी उक्त विशेषताके कारण उरानियम्के नाभि-कणमें घुस गया।

१९३९ ई०के आरम्भमें दो जर्मन वैज्ञानिकों—हान् और स्ट्रासमान्ने प्रयोग करके दिखलाया कि न्युट्रन्की सहायतासे उरानियम्को करीब-करीब बराबरके दो भागोंमें विभक्त किया जा सकता है, और जिस वक्त वह फटता है, उस वक्त उससे एक भारी शक्ति निकलती है, न्युट्रन्में $\frac{1}{30}$ वोल्ट शक्ति होती है, लेकिन वह उरानियम् परमाणुसे २० करोड़ वोल्टकी शक्ति विसर्जित करा सकता है।—अपनी शक्तिसे अरबगुना यह शक्ति कहाँसे आती है ? उरानियम्के दोनों टुकड़ोंको तोलनेसे वह मूल परमाणुसे कुछ कम उतरते हैं। यही खोई हुई भूत-मात्रा आइन्स्टाइनके सिद्धान्तानुसार शक्तिके रूपमें परिणत हो जाती है।

परमाणुका नाभिकण प्रायः न्युट्रन्के मिश्रणसे बना है। जब उरानियम्पर न्युट्रन्से गोलाबारी की जाती है, उस समय उरानियम्से कई न्युट्रन् खुल पड़ते हैं। यदि हम उरानियम्के डलेको न्युट्रन्से गोलाबारी करें, तो वह उरानियम्के परमाणुओंमेंसे एकको तोड़ देगा, और उसमेंसे चार न्युट्रन् निकलेंगे। ये चारों फिर चार उरानियम् परमाणुओंपर प्रहार करेंगे। इस तरह थोड़ी ही देरमें अनेक उरानियम् परमाणु फटने लगेंगे और उनसे भारी शक्ति फूटने लगेगी।

न्युट्रन्में न एलेक्ट्रन्की ऋणात्मक और न प्रोटन्की धनात्मक बिजलियाँ हैं, इसीलिए इसे न्युट्रन् (न-उभय=न्युट्रन्) कहा गया है। न्युट्रन् बहुत जल्दी बदलता रहता है। इसकी सहायतासे सौसे अधिक नये परमाणु बनाये जा चुके हैं, और दिन-पर-दिन उनकी संख्या बढ़ती जा रही है युकावाकी खोजोंसे साबित हुआ है, कि न्युट्रन् और प्रोटन एक दूसरेमें तब्दील होते रहते हैं।

२. पोज़ीट्रन्—प्रोटन् (हाइड्रोजनका नाभिकण) न्युट्रन् और पोज़ी-

ट्रन्‌से बना है, यह कह चुके। पोज़ीट्रन् बिजलीकी मात्रामें प्रोटन्‌के बराबर धनवाला है, और उसकी भूतमात्रा एलेक्ट्रन्‌के बराबर है।

§ ६. कुछ परमाणु

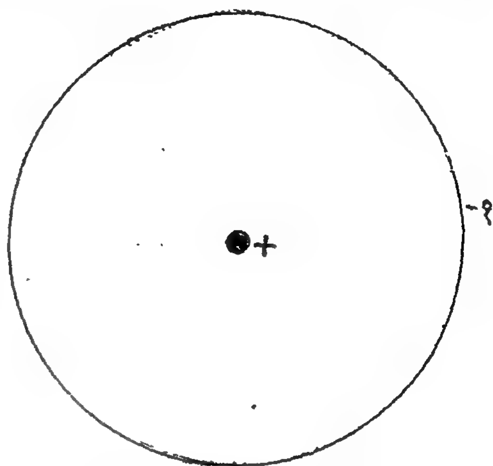
स्पिनोज़ाके मतानुसार तत्त्व वह है, जिसकी सत्ता स्वाधीन है, अर्थात् अपनी सत्ताकेलिए वह दूसरेका मुहताज नहीं। वैशेषिककी व्याख्या भी इससे मिलती-जुलती है। उसने द्रव्यको नित्य और अनित्य दो श्रेणियोंमें विभक्त किया है, जिनमें नित्य द्रव्य परमाणुके रूपमें मिलते हैं। हम अभी बतला चुके हैं, कि जिन परमाणुओंको नित्य, अपरिवर्तनशील, अच्छेद्य माना जाता था, बिना घटी-बढ़ी किये जो ईंटकी भाँति दुनियाकी सभी वस्तुओंके निर्माता बतलाये जाते थे; वे वस्तुतः वैसे नहीं हैं। हम परमाणुके भीतर विचरते-विचरते न्युट्रन तक पहुँच चुके हैं। नाभिकणोंमें धनात्मक बिजली सबसे कम हाइड्रोजनके नाभिकणमें है। एक मानसे २,३.....होते सबसे बड़े परमाणु उरानियम्‌के नाभिकणमें ९२ इकाई धनात्मक बिजलीकी है। न्यूट्रन्‌में धन-ऋणका खात्मा हो जाता है, यह बतला आये हैं। इस प्रकार न्युट्रन्‌से उरानियम् तक शून्य(०)से ९२ इकाई तककी धनात्मक बिजली है।

यह भी बतला आये हैं, कि पृथिवीके ऊपरी स्तरका अधिकांश भाग आठ प्रकारके परमाणुओंके योगसे ही बना है। यहाँ हम परमाणुके भीतरी जगत्‌की विशेष जानकारीकेलिए कुछ परमाणुओंका विवरण दे रहे हैं।

१. हाइड्रोजन

१९वीं सदीके प्रथम पादमें हाइड्रोजन सारे तत्त्वों और सारे पदार्थोंका मूलतत्त्व माना जाता था, किन्तु अब वह बात एक पुरानी कहानीसे अधिक महत्त्व नहीं रखती। हाइड्रोजन सबसे हल्का परमाणु है। इसका भीतरी ढाँचा बहुत सीधा-सादा है—बीचमें नाभिकण है एक इकाई धनात्मक बिजली रखनेवाला प्रोटन्, और उसके व्यास १०$^{-१३}$ इंचसे दस हजार गुनी

दूरीपर उसके $\frac{१}{२०००}$के बराबरका ऋणात्मक बिजलीवाला एक अकेला एलेक्ट्रन् घूम रहा है। एलेक्ट्रन्के सिर्फ़ एक होनेसे हाइड्रोजन उतना सुडौल नहीं होता है। एलेक्ट्रन्की कक्षा हाइड्रोजन परमाणुकी बाहरी सीमा है, (चित्र २६)। हाइड्रोजनके नाभिकण में जितनी धनात्मक बिजली है, उसके अकेले एलेक्ट्रन्में उतनी ही ऋणात्मक बिजली है, इस प्रकार पलड़ा बराबर होकर सारा परमाणु लेनेपर वहाँ धन-ऋण किसीका प्रभाव नहीं दिखाई पड़ता। नाभिकण बाहरी एलेक्ट्रन्से यद्यपि आकारमें छोटा है किन्तु मात्रामें वह उससे दो हज़ार गुना बड़ा है, और इस प्रकार हाइड्रोजन परमाणुकी मात्रा प्रायः सारी ही उसके नाभिकणकी मात्रापर निर्भर है। ऋणात्मक बिजली पास आनेवाली चीज़को धक्का दे बाहर फेंक देती है इसीलिए हाइड्रोजनका एलेक्ट्रन् उसकी सीमाका ज़बर्दस्त पहरेदार है, यह बतला आये हैं। अपने आकारकी भाँति ही अपने रश्मिके वर्णमें भी हाइड्रोजन बहुत सीधा-सादा है। यदि त्रिपार्श्व शीशे द्वारा इसकी किरणको फाड़ा जावे, तो वहाँ दृश्य लालसें लेकर अदृश्य कासनीके परेके वर्णों तक बीच-बीचमें कुछ फ़ासिलेसे पाँच रेखाओंका मुट्ठासा खिंचा मिलता है।



चित्र २६ (हाइड्रोजन)

हाइड्रोजनके प्रोटन् और एलेक्ट्रन्के बीचकी खाली जगह यदि निकल जाये और दोनों जुड़ जायें, तो एक धन-ऋण-विहीन कण बनेगा।

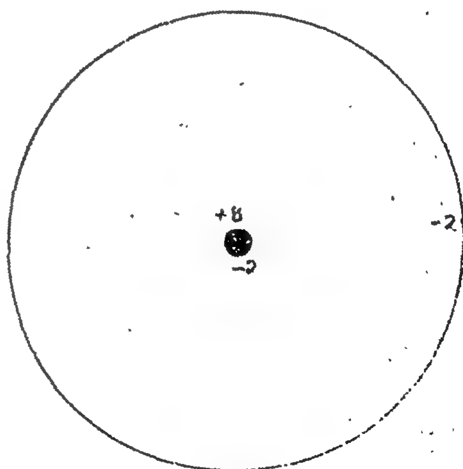
परमाणुओंमें सबसे छोटे हाइड्रोजन और सबसे बड़े उरानियम्की

मात्राओंमें १ : २३८का और दोनोंके नाभिकणोंकी घनात्मक विजलियोंमें १ : १०० का सम्बन्ध है। सभी हाइड्रोजन परमाणु विजली, आकार और ढाँचेमें एकसे होते हैं।

हाइड्रोजनका पता सबसे पहिले कवेन्डिशने १७६६ ई०में लगाया था।

२. हेलियम्

हाइड्रोजनके बाद दूसरा नम्बर हेलियम् परमाणुका है। इसके नाभिकणमें चार प्रोटन् होते हैं और बाहर दो एलेक्ट्रनोंकी एक टोली घूमती है (चित्र २७)। चार प्रोटन् होनेके कारण इसे हाइड्रोजनसे चौगुना होना चाहिए, किन्तु इसकी मात्रा ३·९७ है। एलेक्ट्रन्से वह ७४०० गुना बड़ा है। हेलियम्के नाभिकणमें यदि एक और प्रोटन् घुसाया जाये, तो चारकी जगह ५ प्रोटन् होनेसे उसकी मात्रा या शक्तिको बढ़ना चाहिए था, किन्तु देखा जाता है वह पहिलेकी १३६/१३७ रह जाती है।



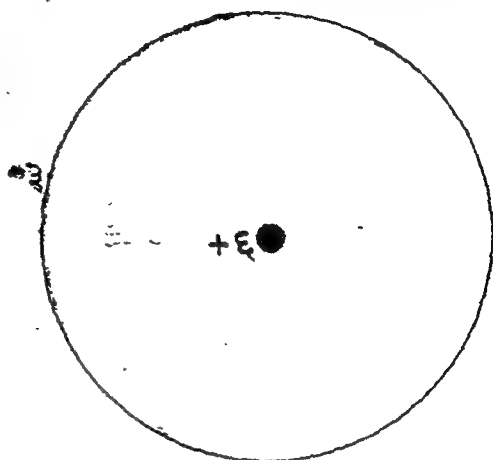
चित्र २७ (हेलियम्)

हेलियम्का नाभिकण अल्फा-कणके बराबर है, यह बतला चुके हैं। १० हज़ार मील प्रति-सेकंडकी चालसे दौड़ लगानेवाले तथा १/१० खर्व इंच आकारके कणके जानेके रास्तेका चित्र लेना बहुत असम्भवसा मालूम हो रहा था। इस समस्याको १९११ ई०में प्रोफ़ेसर टी० आर० विल्सनने हल् किया। प्रहार करनेपर बाहरी एलेक्ट्रन कक्षा छोड़ भाग निकलता है। विल्सनने

कणके भागनेके रास्तेको गीला कर दिया। मगर कण इस आर्द्र भागको अपनी गर्मीसे भाप बना फैलने लगा। फिर वह भाप ठंडे हो रहे कणपर लिपट गई। अब कण बड़ा था, और उसका चमकीला रास्ता फोटोमें लाया जा सकता था। प्लेट फोटो-चित्र ऐसा ही फोटो है।

३. लिथियम्

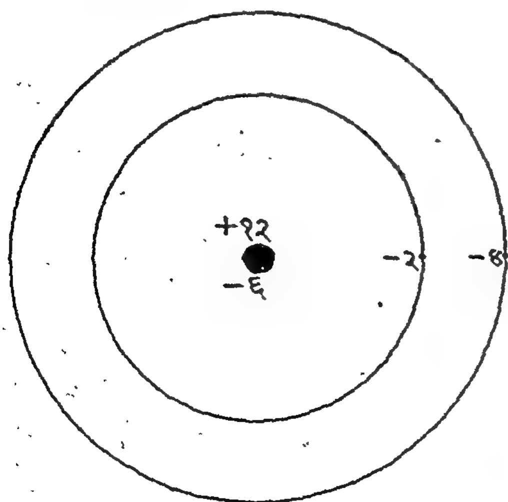
इसके छै प्रोटन्के बराबरके नाभिकणकी धनात्मक बिजलीका नियमन करते हुए ३ एलेक्ट्रन् घूमते हैं (चित्र २८)।



चित्र २८ (लिथियम्)

४. कार्बन

पत्थरका कोयला अधिकांश कार्बन ही है। इसके नाभिकणमें १२ प्रोटन् और ६ एलेक्ट्रन् हैं। नाभिकणके बाहर ६ एलेक्ट्रन् दो टोलियोंमें हैं, जिनमें बाहरी टोली ४ एलेक्ट्रनोंकी है (चित्र २९)। एलेक्ट्रनकी मात्रा नगण्यसी है, इसलिए परमाणुकी मात्रा उसके नाभिकणपर निर्भर करती



चित्र २९ (कार्बन्)

है। कार्बनमें १२ प्रोटन होनेसे उसे हाइड्रोजनके नाभिकण (प्रोटन्)से १·००८×१२=१२·०९६ गुना होना चाहिए, किन्तु वह होता है १२·००३ गुना। बाक़ी ·०९३ धनात्मक विजली, नाभिकणकी गाँठ बाँधनेमें खर्च हुई है। इसके १२ प्रोटनोंका विश्लेषण करनेपर वे ६ न्युट्रनों और ६ प्रोटनोंसे बने मालूम हुए। अपनेसे नीचेके परमाणु बोरोनसे इसमें एक ज्यादा एलेक्ट्रन् है और ऊपरके नाइट्रोजनसे १ कम; तो भी गुच्छक बनानेमें इसकी अद्भुत शक्ति है। इसके बाहरी चारों एलेक्ट्रन् जान पड़ते हैं, फन्दा लिए खड़े हैं, और अनुकूल परमाणुको उधरसे गुजरता देख फन्दा फेंककर फँसा लेते हैं। कार्बनके मिश्रणों या योगोंके बारेमें आगे अभी कहना है। कार्बन धातु और अ-धातुकी सीमापर है। इसकी एक तरफ़ आकर हाइड्रोजन आदि अधातु तत्त्व खतम हो जाते हैं और दूसरी तरफ़ धातुएँ शुरू होती हैं। इसी तरह इसके एक तरफ़ जीवहीन जगत् है, और दूसरी ओर यह खुद सजीव जगत्की तैयारीमें ईंट-गारेका काम देता है।

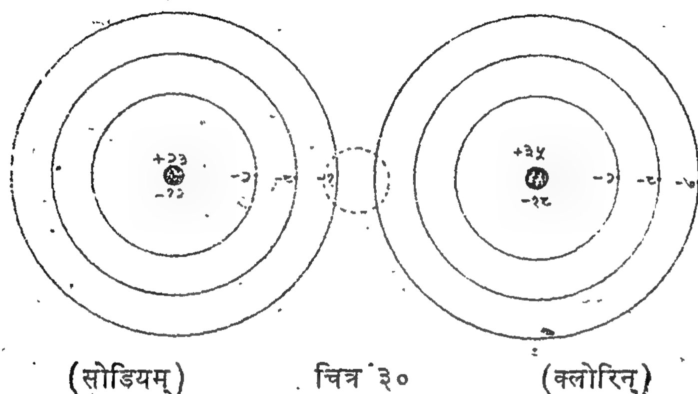
५. सोडियम्

यह शुद्ध सोडा है। इसके नाभिकणमें २३ प्रोटन् और १२ एलेक्ट्रन् हैं। बाहर २,८ की दो टोलियोंमें दो कक्षाओं और सबसे बाहर सीमान्तपर एक एलेक्ट्रन् (चित्र ३०) हैं।

६. क्लोरिन्

क्लोरिन् एक ज़हरीला तत्त्व है, जिसके नाभिकणमें ३५ प्रोटन् और १८ एलेक्ट्रन् हैं। बाहर २,८,७की तीन टोलियोंमें एलेक्ट्रन्की कक्षाएँ हैं (चित्र ३०)। सबसे बाहरवाले सात एलेक्ट्रन् सीमा-रक्षक हैं। क्लोरिन्के परमाणुकी एक और भी किस्म है, जिसके नाभिकणमें ३७ प्रोटन् और २० एलेक्ट्रन् होते हैं।

सोडियम्‌की बाहरी कक्षाका एकाकी एलेक्ट्रन् अकेला फिरते-फिरते ऊबसा गया मालूम होता है; और उधर क्लोरिन्‌की बाहरी टोलीके



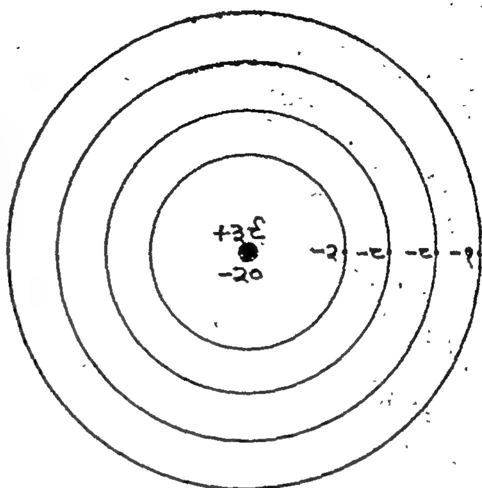
(सोडियम्) चित्र ३० (क्लोरिन्)

सातमें छैसे एकका कुछ मनमुटावसा मालूम होता है। ऐसी अवस्थामें जब सोडियम् और क्लोरिन्‌के परमाणु इकट्ठा होते हैं, तो बाहरी सात और एक एलेक्ट्रन् मिल जाते हैं। दोनों परमाणु अपनी बाहरी कक्षाको ८ एलेक्ट्रनोंवाली मान लेते हैं, और एक हो नमकके रूपमें परिणत हो जाते हैं। अब न क्लोरिन् युद्धमें इस्तेमाल होनेवाली ज़हरीली गैस रह जाती है, और न सोडियम् पानीमें रखनेपर आग लगा देनेवाला पदार्थ; दोनोंके मेलसे एक तीसरी ही चीज़—हमारे खानेका नमक—तैयार हो जाता है।

७. पोटासियम्

इसके नाभिकणमें ३९ प्रोटन् और २० एलेक्ट्रन् होते हैं (चित्र ३१)। धनात्मक इकाई ३९ × १·००८ = ३९·३१२ न हो सिर्फ ३९·१ होती है, शेष ·२१२ केन्द्रकी गाँठ बाँधनेमें खर्च हुआ है। स्मरण रहना चाहिए,

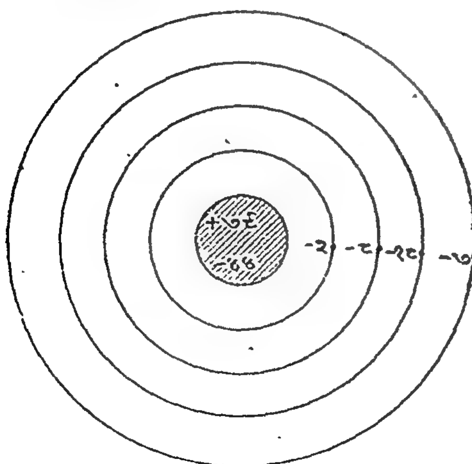
जहाँ तक दूसरे परमाणुसे सन्धि-विग्रहका सम्बन्ध है, वह सिर्फ वाहरी कक्षाके एलेक्ट्रनोंके हाथ में है। सोडियम्‌की भाँति ही पोटासकी भी वाहरी कक्षामें एक अकेला एलेक्ट्रन् रहता है, इसीलिए दोनोंमें कुछ समानताएँ हैं।



चित्र ३१ (पोटासियम्)

८. ब्रोमिन

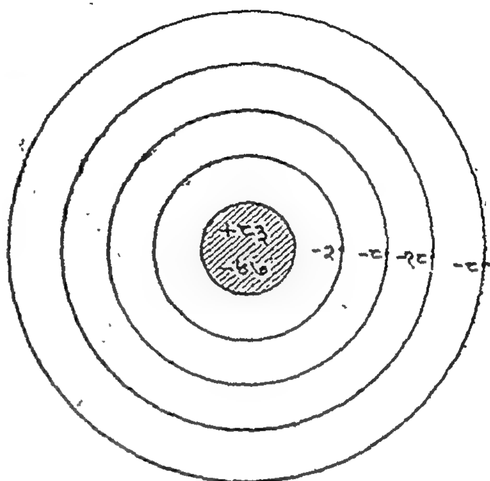
इसके नाभिकणमें ७९ प्रोटन् और ४४ एलेक्ट्रन् हैं। वाहर २,८,१८,७ एलेक्ट्रनोंकी टोलियाँ घूम रही हैं। सबसे वाहर सातकी टोली है (चित्र ३२)। रसायनशास्त्रका मुख्य प्रयोजन परमाणुओंकी सन्धि, विग्रहकी शक्तिसे है और हम वतला चुके हैं, कि इसकी सारी जिम्मेवारी वाहरी एलेक्ट्रनोंपर है। क्लोरिन्‌की भाँति इसके वाहरी एलेक्ट्रनोंकी सात संख्या दोनोंको कितनी ही समानता प्रदान करती है।



चित्र ३२ (ब्रोमिन्)

६. क्रिप्सन्

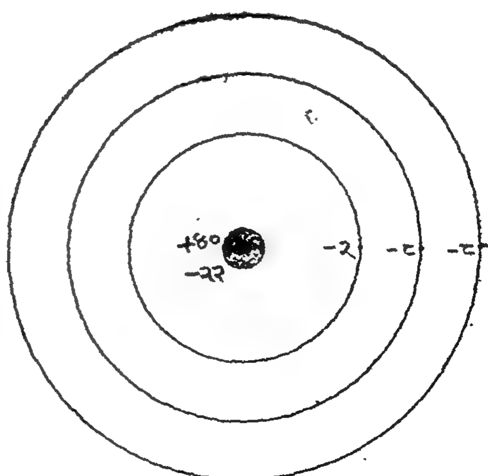
नाभिकणमें ८३ प्रोटन तथा ४७ एलेक्ट्रन् हैं, और ८, ८, १८, ८, की चार एलेक्ट्रन् टोलियाँ गोलके गिर्द चक्कर लगाती हैं (चित्र ३३)। कह आये हैं कि बाहरी कक्षामें एक और सात एलेक्ट्रन् रखनेवाले परमाणु मेल-मिलाप-परायण होते हैं; लेकिन २,८,१८ वाले उतने ही इसमें निष्क्रिय और बे-मुरव्वतसे मालूम होते हैं, मानो वे एक पत्नी-वाले जोड़े हैं।



चित्र ३३ (क्रिप्सन्)

१०. अर्गोन्

इसके नाभिकणमें ४० प्रोटन् और २२ एलेक्ट्रन् है। २,८,८की तीन टोलियोंमें एलेक्ट्रन् चक्कर लगा रहे हैं (चित्र ३४)। सबसे बाहरी खोलमें उनकी संख्या ८ है। २,८१८, एलेक्ट्रन् खोलवाले परमाणु निर्मम होते हैं, यह



चित्र ३४ (अर्गोन्)

बतला आये हैं। अर्गोन् भी इस बातमें हेलियम्से समानता रखता है।

§ ७. परमाणुओंसे पदार्थोंकी रचना

१. अणु

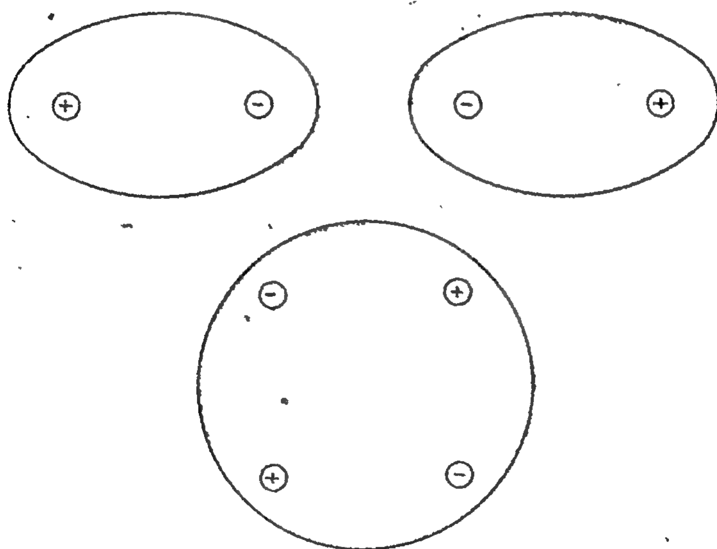
अनेक परमाणुओंका सबसे छोटा गुच्छा अणु है। पिंडके भीतर--शान्त जल, 'अचल' हीरे तकके भीतर--अणु निरन्तर गति करते रहते हैं, और गति भी साधारण नहीं, ९६० मील प्रतिघंटेके वेगसे, जब कि तेज़ हवाका वेग सिर्फ़ १६ मील प्रतिघंटा होता है। अणुका भार उतना ही होता है, जितना कि उसके बनानेवाले परमाणुओंका, और उन्हींकी संख्याके अनुसार उसका आकार भी होता। हाँ, गुणमें अवश्य परिवर्तन होता है, जैसा कि सोडियम् और क्लोरिन्के परमाणुओंसे बने नमकके अणुके बारेमें अभी कह आये हैं।

विश्वकी जो विचित्रता हमें दिखलाई दे रही है, वह परमाणुओं और उनके विधायक प्रोटनों तथा एलेक्ट्रनोंके योगसे है। यदि प्रोटन् और एलेक्ट्रन् मिश्रित न होते, तो प्रोटन् और एलेक्ट्रन्की गैसें भले ही मिलतीं, किन्तु विश्वमें गैसोंको छोड़ दूसरी कोई चीज़ नहीं दिखाई पड़ती। लेकिन ऐसा नहीं है, प्रोटन् और एलेक्ट्रन् मिश्रित होते हैं, हाइड्रोजनमें वह एक दूसरेसे इतने समीप रहते हैं, कि दोनोंकी एक दूसरेसे विरोधी (धनात्मक ऋणात्मक) बिजलियाँ उलझकर धनऋणके भावको छोड़ एक हो जाती हैं; और इस प्रकार धनात्मक ऋणात्मक बिजलियोंका प्रभाव परमाणुकी सीमाके बाहर नहीं जाने पाता। इस तरहकी साम्य-अवस्थामें एक परमाणु दूसरे परमाणुके पास निस्संकोच जा सकता है; और जैसा कि पहिले कहा गया है, अपनी बाहरी कक्षापर अनुकूल संख्यावाले एलेक्ट्रनोंके होनेपर गठ-बंधन भी हो सकता है; जिससे अणु, अणुगुच्छक[१], पिंड आदि बन सकते हैं।

---

[१] Colloid.

दो हाइड्रोजन परमाणुओंसे बननेवाले हाइड्रोजन अणुकी ओर ज़रा देखिए। हाइड्रोजनके पास सिर्फ एक एलेक्ट्रन् नाभिकणकी चारों ओर घूमता है, इसीलिए वह उतना सुडौल नहीं होता, जितने कि अनेक एलेक्ट्रन्वाले दूसरे परमाणु। हाँ, दो हाइड्रोजनोंके मिलनेपर, दो दीर्घ वृत्तोंके योगसे बने वृत्तकी भाँति वह अधिक सुडौल हो जाता है (चित्र ३५)। वैसे तो जब काल प्रत्येक भौतिकतत्त्वका एक अभिन्न अंग है, तो पूर्ण सुडौल वृत्त आदि वास्तविक नहीं हो सकते। वैसे भी अणु प्रायः सुडौल नहीं होते। हाइड्रोजन जैसे मेल-मिलापकी प्रवृत्ति रखनेवाले परमाणु पास आनेपर एक दूसरेसे मिल जाते हैं, यदि कोई बाधा न हो। मिले



चित्र ३५

हुए हाइड्रोजन परमाणु एक दूसरेसे अलग नहीं होना चाहते। यदि ताप बढ़ाया जाये, तो वह एक दूसरेके ऊपर चक्कर काटते, भरसक साथ रहनेकी कोशिश करते हैं। हाँ, जब ताप बहुत अधिक हो जाता है, तो

उनकी मेल-मिलापवाली शक्ति क्षीण हो जाती है, उनका हिलना बहुत तीव्र हो उठता है, और दोनों तेज़ीके साथ उड़कर अंधाधुंध एक दूसरेको धक्का दे दौड़ने लगते हैं। उस वक़्त उनकी उस मेल-मिलापवाली शक्तिका कहीं पता नहीं मालूम होता। इस तरह हाइड्रोजनकी तीन अवस्थाएँ हैं—मेल-मिलापकी तीव्रता, मन्दता और अभाव, इन्हींके अनुसार हम उसे ठोस, तरल और गैसकी अवस्थामें पाते हैं।

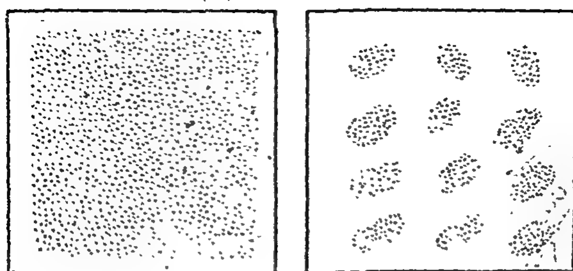
अणुओंपर जब प्रकाशकी किरणें पड़ती हैं, तो वे हिलने लगते हैं—प्रकाशमें भार, दबाव है यह पहिले कहा जा चुका है। जब एक अणु अपने पास आये प्रकाशको बिना बदले उसी रूपमें पड़ोसीके पास पहुँचा देता है, तो उसे पारदर्शक कहते हैं—जैसे शीशा और स्फटिक। कोई-कोई परमाणु सिर्फ़ एक ही वर्णक प्रकाशके साथ ऐसा कर सकते हैं, ऐसी अवस्थामें वह सिर्फ़ एक रंगके पारदर्शक होते हैं। यह साफ़ है कि प्रकाशके सातों रंगोंमें जिस रंग या रंगोंको वह अपने साथियों तक पहुँचा सकता है, वही उस पारदर्शकका रंग होगा। लाल शीशा सिर्फ़ लाल, और हरा सिर्फ़ हरी प्रकाशकिरणको पड़ोसीके पास पहुँचानेका अपनेको ज़िम्मेवार समझता है, इसलिए उनमें एक ही रंग दिखलाई पड़ता है।

२. अणु-गुच्छक[1]

अणुगुच्छक अणुओंसे बड़े किन्तु बालुकणसे छोटे, $\frac{१}{५०००}$ से $\frac{१}{५००००००}$ इंच व्यासके होते हैं। इनमें कुछ दर्जनसे हज़ारों अणु तक होते हैं। ये एक आकारके नहीं होते, कोई इनमें छोटे होते हैं, कोई उनसे कई गुने बड़े। हाइड्रोजन परमाणुको हमने देखा, वह कितना सीधा-सादा है। ऊपरवाले परमाणु जैसे-जैसे और पेचीदा होते जाते हैं, अणुओंमें पेचीदगी और बढ़ती जाती है। विश्वमें इतने वैचित्र्यका कारण, अणु-

---

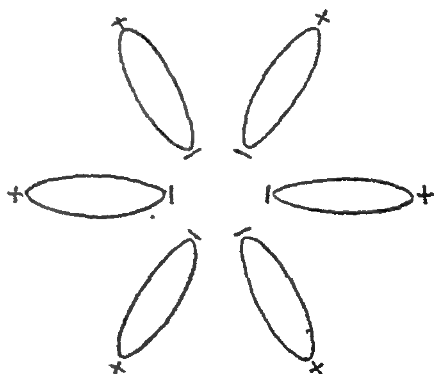
[1] Colloid.



चित्र ३६

गुच्छकोंकी यही पेचीदगी है, जिससे कि वे जीवनके आधार बनते हैं, और अगली सीढ़ीपर जीवन सम्भव हो जाता है।

ऊपरके रेखाचित्र (३६)की तरह अणुगुच्छक कितनी ही वार तितर-वितरसे दीखते हैं, और कितनी ही वार उनके झुर्मुट या गुच्छे—अणुओंके नहीं अणुगुच्छकोंके से। यही खास कारण है, जिससे लम्बोतर अणु ऋणात्मक छोरपर इकट्ठे हो जाते हैं (चित्र ३७)। इस तरह इकट्ठे हुए अणुओंके वाहरकी ओर धनात्मक छोर होनेके कारण वे उस तरहकी विजलीके घिरावेमें रहते हैं; और धनात्मक विजलीसे घिरे दूसरे अणु-गुच्छकको अपने पास नहीं आने देते। एक वार इस तरहके गुच्छक वन जानेपर वे स्थायीसे वने रहते हैं, क्योंकि वाहरकी धनात्मक विजलीका घिरावा भी इन संवद्ध अणुओंको विखरनेसे रोकता है।



चित्र ३७

यदि हम साधारण नमकका पानी इन लटकते हुए अणु-गुच्छकोंपर डालें, तो वे पानीमें घुल जायेंगे। नमक बनाने वाले सोडियम् और क्लोरिन्के अणुओंमेंसे सोडियम्के ऋणात्मक बिजलीवाले कितने ही परमाणु, क्लोरिन्के कितने ही धनात्मक परमाणुओंसे संबंध तोड़ लेते हैं। यह संभव है, कि ऋणात्मक बिजलीवाले सोडियम् परमाणु धनात्मक बिजलीवाले अणुगुच्छकोंके किनारे जमा हो जावें, और इस तरह गुच्छकके बाहर जो बिजलीकी रक्षक खोल था, वह नष्ट हो जावे। ऐसी अवस्थामें सारे अणुगुच्छक कण एक दूसरेसे सटकर एक डला-सा बन सभी बर्तनके नीचे बैठ जायँगे।

गंगा-सागर और दूसरी नदियोंके डेल्टामें समुद्रके मुँहपर जितनी मिट्टी जमा हो रही है, वह उस मिट्टीसे कहीं ज़्यादा होती है, जो कि पानीके साथ पंकके रूपमें बहकर आ रही है। इसकी सच्चाईका पता आसानीसे मालूम हो सकता है, यदि मुहानेसे कुछ ऊपर पानीको थिरकर मिट्टीकी नाप ले ली जाये। डेल्टामें जमा होनेवाली इतनी मिट्टी कहाँसे आती है? आती पानी ही के साथ है, किन्तु कीचड़की शकलमें नहीं। वह बहुत सूक्ष्म अणुगुच्छकोंकी शकलमें पानीसे लटकती हुई आती है। समुद्रके मुँहपर पहुँचनेपर समुद्रका पानी नदीके पानीसे मिलता है। ऊपर बतलाये तरीकेसे सोडियम् और क्लोरिन्के परमाणु अलग हो मिट्टीके अणुगुच्छकोंके बाहरी खोलको तोड़ देते हैं, और अन्तमें मिट्टीके ये अणु-गुच्छक इकट्ठे हो डले बन भारी होनेके कारण पानीके नीचे बैठ जाते हैं। ये अणु-गुच्छक समुद्रसे दूरवाले नदीके पानीमें छोटे होनेसे हलके थे, इसलिए थिराते वक़्त पानीके नीचे नहीं बैठे थे।

अणुगुच्छकोंकी इस विशेषताका प्रयोग कितनी ही जगहोंपर देखा जाता है। इनका रहस्य न जाने भी प्राचीन कालमें लोग इनका प्रयोग करते थे। आजकल पत्थरकी पटिया फाड़ने या दूसरे कामकेलिए जिस तरह बारूदका प्रयोग होता है, हज़ार वर्ष पहिले वैसा नहीं हो सकता था, क्योंकि बारूद उस समय अज्ञात थी, पाँच हज़ार वर्ष पहिले भी मिश्री लोगोंने अपने पिरामिडोंको बनानेमें बड़े-बड़े पत्थरोंको इस्तेमाल किया

है। बारूद छोड़ उनके पास तो लोहा भी नहीं था, फिर ऐसी हालतमें इतने बड़े पत्थरोंको चट्टानोंसे अलग कैसे कर सके ? बात यह थी—वे पीतल या ताँबेकी छिन्नीसे काटकर चट्टानमें पहिले सूराख बनाते थे, फिर सूखी लकड़ीके पच्चरोंको सूराखोंमें घुसा देते थे। इसके बाद इन पच्चरोंको भिगोते थे। लकड़ीके सेलूलूस[1] (लकड़ीके निर्मापक क्षुद्र सेलोंका पतला खोल, जो बहुत चिम्मड़ होती है)के अणुगुच्छक पानीके अणुओंको जोरसे पकड़कर अपनी ओर खींच लेते हैं, लकड़ी फूल जाती, और अवकाश देनेके लिए पत्थरको फटना पड़ता।

अणुगुच्छकोंको इस प्रकार एक तरफ़ बिजलीवाला छोर मिल जाता है और दूसरे छोरकी बिजली बाहरी सीमापर घेरा डाल आन्तरिक गड़बड़ी और बाह्य बाधासे रक्षा करती है। ये गुण मालूम हो जानेपर अब उसके द्वारा बहुतसे अज्ञात कारणोंकी व्याख्या और बहुतसे कामोंमें उनका उपयोग होने लगा है। लंदनमें इतना कुहरा क्यों जमा रहता है ? चूल्हेमें जलते कोयलेका तेलवाला भाग बूंदमें लटकते जलके अणु-गुच्छकोंको ढाँककर उन्हें स्थिरता प्रदान करता है, और इस प्रकार वे डला बन भारी हो गिरते नहीं, बल्कि हवामें लटकते हुए कुहरेको स्थिर कर देते हैं।

साबुन क्यों हाथके मैलको साफ़ कर देता है ? साबुनके अणु-गुच्छक मैलके पास पहुँच उससे उसी तरह चिमट जाते हैं, जैसे सूखी लकड़ीका सेलोलूस पानीके गुच्छकोंसे चिपटा था। इस प्रकार मैलके सूक्ष्म कण बड़े डलोंका रूप ले लेते हैं, जिससे पानी उन्हें आसानीसे धो सकता है।

अणुगुच्छक जीवनयंत्रके निर्माणमें कैसे उपयोगी होते हैं, इसकी परीक्षा हालमें उपसला विश्वविद्यालयके प्रोफ़ेसर स्वेडवेर्गने की है, उन्होंने प्राणधारी शरीरकी चीजों—अंडेकी सफ़ेदी, रुधिरके रक्त-कण[2]को ले अत्यन्त शक्तिशाली 'भ्रामक-यंत्र'[3]में घुमाया। इस यंत्र (देखो फोटो-चित्र

[1] Cellulose. [2] Haemoglobin. [3] Ultra-Centrifuge.

१०)में एक फ़ौलादी चक्का होता है, जो कि बहुत तेज़, एक मिनटमें ४५००० चक्करकी गतिसे घुमाया जा सकता है। उसका घूमना चक्केके छेदमें रखी चीज़को हमारे साधारण गुरुत्वाकर्षणसे सवा चार लाख गुनी शक्तिसे प्रभावित करता है। तरल वस्तुमें लटकते अणु-गुच्छक जो तलछट बनकर नीचे बैठते हैं, वह गुरुत्वाकर्षणके खिंचावके कारण ही वैसा करते हैं। जब हम पृथिवीके गुरुत्वाकर्षणसे सवालाख गुनी ताक़तको इस्तेमाल करेंगे, तो तलछट जमानेकी ताकत भी उसी प्रकार बढ़ेगी। इस प्रयोगसे हम मालूम कर सकते हैं, कि किस प्रकारके अणु-गुच्छक कितनी मात्राके गुरुत्वाकर्षणको बर्दास्त कर सकते हैं, और तलछटके रूपमें नीचे नहीं बैठते। साधारण शीशेकी नलीके पानीमें लटकते अणु-गुच्छक (नली और पानीके बिल्कुल स्थिर होनेके कारण) सिर्फ़ धरतीके गुरुत्वाकर्षण द्वारा ही नीचे बैठनेकेलिए मजबूर होते हैं। भ्रामक-चक्र जब सवालाख गुनी गुरुत्वाकर्षण शक्तिसे वह काम करने लगता है, तो अणु-गुच्छकोंकेलिए उसका मुक़ाबिला करना आसान काम नहीं होता। इस तरीक़ेसे स्वेडबेर्गने पता लगाया है, कि प्राणधारियोंके शरीरकी भिन्न-भिन्न चीज़ोंमें अणु-गुच्छककी मात्रा कितनी है। इस प्रयोगसे मालूम हुआ है कि प्राणिशरीर बनानेवाले पदार्थोंकी मात्रा ३४,५०० (यहाँ आक्सीजनकी मात्राको १६ मानी गई है), या उसके २,३,६ या अधिक संख्याओंका गुणन-फल है। जिससे सिद्ध हुआ कि प्राणिशरीर जिन कणोंसे बना है, उनका अणु-भार ३४,५०० है, गोया हमारे शरीरकी जो ईंटें हैं, वे आक्सीजनसे $\frac{३४५००}{१६} = २१५६\frac{१}{४}$ गुनी भारी हैं।

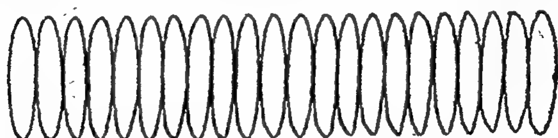
स्वेडबेर्गकी प्रक्रियाका प्रयोग हालमें केश, सींग और नाखूनपर किया गया है। यह चीज़ें जिस पदार्थसे बनी हैं, उसे **केराटिन्**[१] कहते हैं। आस्टबरीने एक्स-रेसे परीक्षा करके पता लगाया, कि केराटिन् दो

---

[१] Keratin.

प्रकारकी होती है, जिसे यूनानी अक्षरोंमें अलफा-केराटिन् और बीटा-केराटिन् कहते हैं। अल्फा-केराटिन्‌के अणु लचक रखते हुए एक दूसरेसे जुड़े रहते हैं। केश अल्फा-केराटिन्‌से बने हैं, इसीलिए वे इतने लचकदार होते हैं। बीटा-केराटिन्‌के अणु बहुत कड़ाईके साथ एक दूसरेसे बँधे रहते हैं, इसीलिए उनमें लचक नहीं होती। सींग और नाखून बीटा-किराटिन्‌से बने हैं। इन दोनों प्रकारकी केराटिनोंको एक दूसरेमें बदला जा सकता है। बालोंमें स्थायी लहर निकलवाना अल्फा-केराटिन्‌को बीटामें बदलना है, जिसे एक गर्म धातुके टुकड़ेके द्वारा किया जाता है। हिरन और बकरीकी सींगोंमें एक तरहकी स्थायी लहरें प्रकृतिने ही निकाल रखी हैं, हम केशोंमें, मानो उसकी नकल कर रहे हैं। पानी, खासकर गर्म पानी से भीगनेपर नाखून बीटासे अल्फा-केराटिन् बनने लगता है। आस्टबरीने केराटिन्‌के अणुओंकी परीक्षा की तो मालूम हुआ कि उनका परमाणु-भार ३४,५०० है। स्वेडबेर्गके सिद्धान्तकी पुष्टि एक्स-रे और अतिशक्ति भ्रामक-यंत्र दोनों एक स्वरसे कर रहे हैं।

अणुगुच्छकोंका गुच्छेके रूपमें परिणत होना अणुओंके भीतरकी ऋणात्मक-धनात्मक बिजलीवाले दोनों छोरोंके मिलने और दूर हटनेके कारण हैं, यह बतला चुके हैं। तेल क्यों पानीपर तैरता है ? क्योंकि तेलके अणुओंका एक सिरा पानीसे जुड़ता है, और दूसरा दूर हटता है। यह जुड़ना-हटना दो प्रकारकी बिजलियोंके कारण है। पानीपर तेलके अणु



चित्र ३८

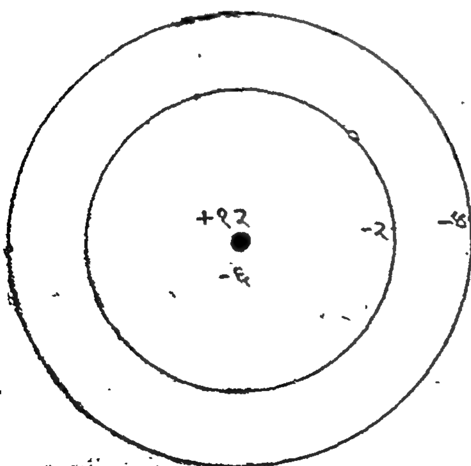
सिपाहियोंकी तरह पाँतीसे (चित्र ३८) खड़े हैं, उनके सिर्फ़ पैर पानीको छू रहे हैं। यदि किसी तरीक़ेसे पानी और तेलके अणुओंके सिरेको मिलाने-

वाली विजलीके बन्धनको शिथिल कर दिया जाये, तो तैरनेवाले अणु डूबकर मिश्रित हो सकते हैं। अमिश्र पदार्थको मिश्र बनानेमें यही युक्ति काममें लाई जाती है।

अणु-गुच्छक हमें वहाँ पहुँचा देते हैं, जहाँसे जीवन आरम्भ होता है, यह हम कह आये हैं। जीव और अजीवके बीचके सेतु हैं, छन्नेसे पार होनेवाले विरस्; ये अणु-गुच्छकोंकी ही एक किस्म हैं। विरस्के बारेमें हम आगे कहेंगे।

§ ८. कार्बनके योग

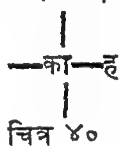
जो अणुगुच्छक जीवनके निर्माणकी ईंटें हैं, वे कार्बन्की सहायतासे ही बनते हैं। हम कह आये हैं कि परमाणुओंको एक दूसरेसे मिलानेका काम उसके गिर्द घूमनेवाले एलेक्ट्रनोंकी बाहरी टोलीके हाथमें है; और यह भी कि २, ८, १८की टोलियाँ बड़ी निर्मम होती हैं, वह मेल-मिलाप नहीं अलग-अलग रहनेको ज़्यादा पसन्द करती हैं। कार्बनकी बाहरी



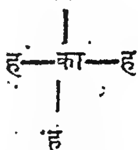


चित्र ३९

टोलीमें चार एलेक्ट्रन् हैं, जो पास-पड़ोसपर छापा मारना अपना कर्तव्य समझते हैं। जहाँ भी कोई कामकी चिड़िया (परमाणु) पाससे गुजरी कि उन्होंने उसपर झपट्टा मारा। फैलती हुई बेलें जैसे अपने फंदों (रेशों) को पहिले फेंकती हैं, और जहाँ ही उन्हें कोई सहारेकी चीज़ मिली, कि उसे लपेटकर उन्होंने उसपर चढ़ना शुरू किया। (चित्र ३९)में कार्बन (का)के चार वाहरी एलेक्ट्रनोंको वाहरी परिधि (परमाणुकी सीमा)पर दिखलाया गया है। ये चारों शिकार—चाहे मेल-मिलाप कह लीजिए—की ताक या 'प्यास'में व्यग्र हैं। उनकी यह प्यास तब तक नहीं बुझती, जबतक वह किसी संगीको पा नहीं जाते। मान लो उनके पाससे एक हाइड्रोजन परमाणु गुजरता है। हाइड्रोजन परमाणुकी सीमापर सिर्फ़ एक एलेक्ट्रन् है। यह निश्चय है, कि यदि पड़ोसीको प्यास न हो, तो सिर्फ़ एक हाथसे ताली नहीं वजती। कार्बन (का)का एक एलेक्ट्रन् हाइड्रोजन (हा)के इस अकेले एलेक्ट्रन्से मेल करता है (चित्र ४०)। अब यह दो परमाणुओंसे बना अणु बन जाता है। रसायनशास्त्री प्यासे एलेक्ट्रनोंको चक्केके आरेसे प्रकट करते हैं। कार्बनके पास चार प्यासे एलेक्ट्रन् हैं, इसलिए (का)की चारों ओर चार रेखाएँ खींचते हैं (चित्र ४०)। हाइड्रोजनके पास एक प्यासा एलेक्ट्रन् है, इसलिए उससे निकलनेवाली सिर्फ़ एक रेखा है। कार्बनके पास जब एक हाइड्रोजन आया, तो हाइड्रोजनकी प्यास तो शान्त हो गई, किन्तु कार्बनके सिर्फ़ एक एलेक्ट्रन् हीकी प्यास बुझी, वाक़ी तीन अब भी प्यासे हैं, जैसा कि चित्र ४०में दिखलाया गया है, यदि कार्बनके पास चार हाइड्रोजन आयें, तो उसके सारे प्यासे एलेक्ट्रन तृप्त हो जावेंगे (चित्र ४१)। किन्तु यहाँ वह पाँच परमाणुओंका गुच्छक (मेथेन गेस[१] दलदलसे



चित्र ४०



चित्र ४१

---
[१] Methene gas.

निकलनेवाली हवा) बनकर यहीं तक सीमित हो जावेगा। यदि ऐसे परमाणु आकर मिलें, जिनके कुछ एलेक्ट्रन प्यासे ही रहे जायें, तो गुच्छकमें परमाणुओंकी संख्या बहुत ज्यादा की जा सकती है। जैसे यदि दो कार्बन मिलाये जायें (चित्र ४२), तो उनके एक-एक एलेक्ट्रन तो तृप्त हो जावेंगे, किन्तु इस गुच्छकमें छै एलेक्ट्रन प्यासे रह कर अपनी जमातको बढ़ानेकी कोशिश करेंगे। इस तरहके प्यासे एलेक्ट्रनोंकी संख्या बहुत दूर तक बढ़ सकती है, (चित्र ४३)।

```
   |    |
 —का—का—
   |    |
```

चित्र ४२

```
   |    |    |
 —का—का—का—
   |    |    |
```

चित्र ४३

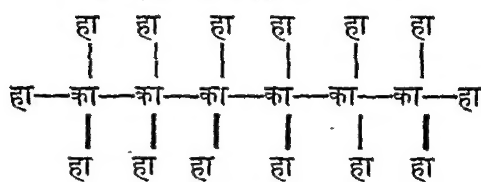
इन परमाणुओंकी भीतरी बनावटको संक्षेपमें लिखनेकेलिए रसायनशास्त्रने एक खास प्रक्रिया निकाली है। हर एक परमाणुका अपना संकेत है, जैसे कार्बन—**का**, हाइड्रोजन—**हा**, आक्सीजन—**आ**। किसी गुच्छकमें जब एक परमाणु एकसे अधिक संख्यामें आता है, तो उसके आगे नीचेकी ओर उस संकेत संख्याको लिख देते हैं, जैसे चित्र ४० का सूत्र होगा **क ह**। जल दो हाइड्रोजन और एक आक्सीजन परमाणुसे बना है, इसे चित्रमें **हा—आ—हा** और सूत्रमें **$हा_2$ आ** लिखते हैं। ये सूत्र और उनके चित्र सिर्फ़ कल्पनापर नहीं, बल्कि प्रयोगपर निर्भर हैं। एक परमाणुके पास कितने प्यासे एलेक्ट्रन हैं, यह प्रयोग ही बता सकता है। फिर गुच्छेमें ज्यादासे-ज्यादा उतने ही परमाणु आवेंगे, जितने कि उसमें प्यासे एलेक्ट्रनोंकी संख्या है, जैसे **का $हा_4$** गुच्छकमें कोई प्यासा एलेक्ट्रन न होने से दूसरा परमाणु नहीं आ

```
           हा                      हा    हा
           |                       |     |
   हा—का—का—हा            हा—का—का—हा
       |   |                       |     |
           हा                      हा    हा
                                  (एथेन्)
```

चित्र ४४

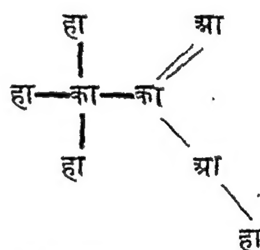
सकता। हाँ यदि **का$_{२}$ हा$_{४}$** हो तो अभी भी दो एलेक्ट्रन प्यासे बच रहते हैं। उन्हें भी दो हाइड्रोजनोंसे तृप्त कर देनेपर एथेन गेस[१] बनती है। चित्र ४४)।

कुछ पदार्थोंके रासायनिक विश्लेषण निम्न चित्रों (४५-४८)से मालूम हो जायेंगे—हेक्सेन्(का$_{२}$ हा$_{१२}$) चित्र ४५



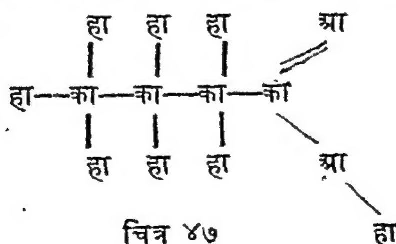
चित्र ४५

एसेटिक एसिड् (का$_{२}$ हा$_{४}$ आ$_{२}$) (चित्र ४६) एक प्रकार-का तेज़ाब (ऐसिड्)है—आक्सीजनमें दो प्यासे एलेक्ट्रन् होते हैं। याद रखना चाहिए, कि यदि किसी गुच्छकके सभी एलेक्ट्रन् तृप्त नहीं हैं, तो उसका रूप स्थिर नहीं होता।



चित्र ४६

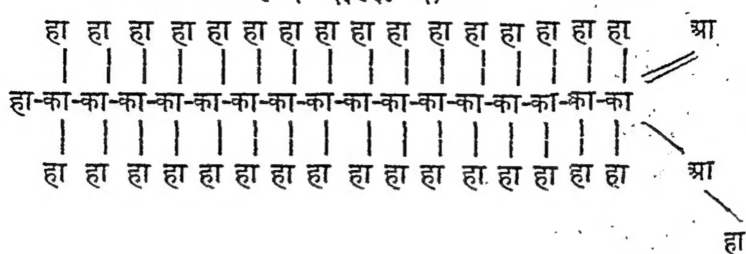
बुटिरिक तेज़ाब है (का$_{४}$हा$_{८}$आ$_{२}$) चित्र ४७—



चित्र ४७

[१] Ethene gas.

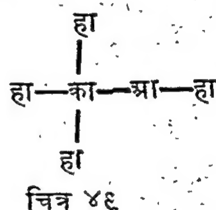
पामिटिक तेज़ाव है (का$_{१६}$हा$_{३२}$आ$_{२}$) चित्र ४८—



चित्र ४८

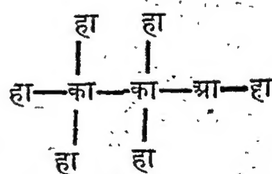
हर तेज़ावके चित्रमें **का आ हा आ** (का आ^{२} हा) आता है, इसलिए उपरोक्त तीन तेज़ावोंके सूत्रोंको **का हा$_{३}$ का आ आ हा**, **का$_{३}$ हा$_{७}$ का आ आ हा**, **का$_{१५}$ हा$_{३१}$ का आ आ हा** लिखते हैं। सूत्रमें वार-वार और चित्रमें एक जगह आनेवाले ये सूत्राक्षर पदार्थकी जातिको वतलाते हैं, जैसे कि ऊपर **का आ आ हा** तेज़ावोंको वतलाता है, इन्हें **बीजाक्षर** कहते हैं। **का आ आ हा** बीजाक्षर जिसमें आये, वह प्राणिज-तेज़ाव है। **आ हा** रेडिकल जिसमें आता है, वह किसी तरहका अल्कोहिल (मद्यसार) होगा जैसे—

मिथिल मद्यसार (**का हा$_{३}$ आ हा**) मिथिनमें आक्सीजनका एक परमाणु वढ़ानेसे (चित्र ४९)—

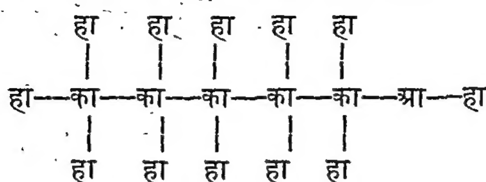


चित्र ४९

एथिल मद्यसार (का$_{२}$ हा$_{५}$ आ हा)—एथिनमें एक आक्सीजन वढ़ाने-से (चित्र ५०)—

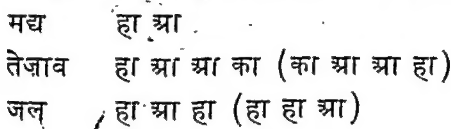


अमिल मद्यसार (का$_{५}$ हा$_{११}$ आ हा) चित्र ५१—



चित्र ५१

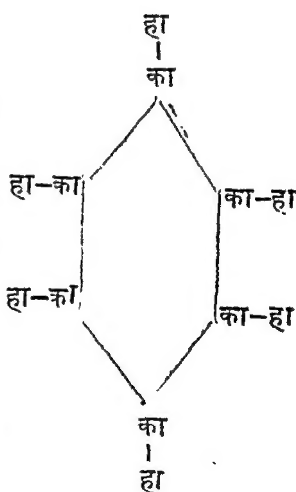
मद्यसार, जल और तेज़ाबमें बहुत अन्तर है, किन्तु वह अपनी बनावटमें कितने नज़दीक हैं, यह उनके सूत्रोंसे पता लग रहा है (चित्र ५२)—



चित्र ५२

कार्बन परमाणुओंके योग छोरसे छोर मिलाकर ही नहीं बनते, वे दूसरी शकलमें भी मिलाये जा सकते हैं, और उनसे बनी चीज़ एक नई चीज़ हो सकती है। उदाहरणार्थ बेन्ज़ेन[१] (का$_{६}$ हा$_{६}$)को ले लो—

चित्र (५३)से मालूम होगा, कि इसके सभी एलेक्ट्रन तृप्त हैं, जिनमें तीन जगह तो दुहरे एलेक्ट्रनोंने गठबन्धन किया है। बेन्ज़ेन् अल्कतरासे निकलती है।

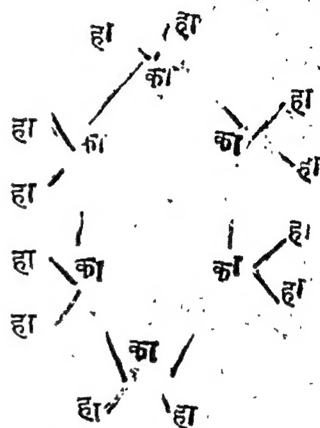


चित्र ५३

साइक्लो-हेक्सन् (का$_{६}$ हा$_{१२}$) (चित्र ५४) यहाँ इकहरे एलेक्ट्रनोंका मेल हुआ है, और वह भी परजातीय (हाइड्रोजन)

[१] Benzene.

के एलेक्ट्रनोंके साथ। ये छल्लेदार या वलयाकार सूत्र हैं। इन सूत्रोंकी बनावटको देखने हीसे पता लग जायेगा, कि दूसरे सहयोगी परमाणुओंके एलेक्ट्रनोंकी संख्याके योग-विभागसे कार्बन लाखों तरहके पदार्थ बना सकता है। का ओ, का ना, का ना ओ, का हा$_{३}$, का$_{२}$ हा$_{५}$, का ओ ओ उ, का हा ओ, का हा$_{२}$ ओ हा आदि बहुतसे कार्बनके बीजाक्षर हैं। कार्बनके दस लाखके करीब योग तो ज्ञात हैं जिनमेंसे आधोंका रहस्य प्रकृतिसे छीना जा चुका है, और वे रसायन शालाओंमें बनाये जाने लगे हैं।



चित्र ५४

गुच्छकमें जितने ही अधिक परमाणु बाहरी एलेक्ट्रनों द्वारा बाँधकर लाये जावेंगे, उतना ही उनसे बना योग भारी होगा।

सभी परमाणु एक दूसरेसे नहीं मिल सकते। मेल उन्हींमें होता है, जिनमें **अनुरूपता**[1] होती है। यह अनुरूपता बाहरी एलेक्ट्रनोंकी विशेष संख्यापर निर्भर है।

अणुओंको आपसमें मिलाकर उन्हें अणु-गुच्छकके रूपमें परिणत करना **मेल-मिलाप**[2] शक्तिका काम है। इसीके ऊपर पदार्थका गैस, तरल या ठोस अवस्थामें होना निर्भर है। तापमान इसमें कितना साधक-बाधक होता है, इसके बारेमें कुछ कहा जा चुका है, और आगे भी कहा जानेवाला है।

ऊपर कार्बनके योगके बारेमें बतलाया गया है। इसी प्रकार दूसरे परमाणुओंके योगसे भी भिन्न-भिन्न पदार्थ बनते हैं। जगतकी सारी वस्तुएँ इसी तरहके योग हैं—

---

[1] Affinity. [2] Cohesion.